संदेह और उनके उत्तर

पहला भाग

इस्लाम में महिला

वेबसाइट

Rasoulallah.net

नबंर	विषय - सूची	पैज नबंर
1	इस संदेह व ऐतराज़ का रद्द और जवाब कि महिला की मीरास (उत्तराधिकार) पुरुष की मीरास से आधी है।	3
2	महिला के फितना होने से संबंधित संदेह व ऐतराज़ का रद्द और जवाब और उसके शैतान की तरह होने का अर्थ	8
3	महिला की आवाज सत्र होने के संबंधित ऐतराज़ का जवाब और उसके टेढ़ी पसली से पैदा होने का मतलब	14
4	मुस्लिम महिला का गैर मुस्लिम पुरुष से विवाह करने कि मनादी व रुकावट पर संदेह व ऐतराज़ और उसका रद्द	23
5	इस्लाम और दूसरे धर्मों में महिला का उत्तराधिकार (विरासत)	26
6	इस्लाम और दूसरे धर्मों में बहुविवाह: लेखक: जमाल मुहम्मद ज़की	29

(1) इस संदेह व ऐतराज़ का रद्द और जवाब कि महिला की मीरास (उत्तराधिकार) पुरुष की मीरास से आधी है।

यह सही व सत्य है कि पवित्र क़ुरआन में विरासत (उत्तराधिकार) के बारे में उतरने वाली आयतों में अल्लाह तआ़ला का यह आदेश भी है:

﴿لِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ الْأُنثَيَيْنِ﴾ [1]

(अर्थ: (एक) बेटे का हिस्सा दो बेटियों के (हिस्सों के) बराबर है।)

लेकिन महिला और पुरुष की मीरास (उत्तराधिकार) में भेदभाव का उपयोग करके जो लोग इस्लाम में महिला की योग्यता पर संदेह पैदा करने की कोशिश करते हैं वे यह नहीं जानते कि महिला को विरासत में पुरुष का आधा हिस्सा देना कोई समान्य नियम नहीं है जो महिलाओं और पुरुषों की विरासत की सभी स्थितियों में लागू होता हो, क्योंकि पवित्र क़ुरआन में यह नहीं कहा गया है कि: "अल्लाह विरासत (उत्तराधिकार) के बारे में वारिसों (उत्तराधिकारों) के लिए तुम्हें यह आदेश देता है कि एक पुरुष का हिस्सा दो महिलाओं के हिस्सों के बराबर है।" बल्कि यह कहा है कि अल्लाह तुम्हें तुम्हारे बच्चों (के उत्तराधिकार) के बारे में यह आदेश देता है कि: "एक पुरुष (बेटे) का हिस्सा दो महिलाओं (बेटियों) के (हिस्सों) के बराबर है।"

जिसका स्पष्ट अर्थ यह है कि पुरुष और महिला की विरासत के बीच यह असमानता व फर्क कोई समान्य नियम नहीं है जो पुरुष और महिलाओं की विरासत की सभी स्थितियों में लागू होता हो, बल्कि यह केवल विरासत की कुछ सीमित स्थितियों में लागू किया जाता है।

---

[1] सूरह: अल-निसा, आयत संख्या: 3

विरासत से संबंधित इस्लामी आदेश की सत्य समझ व ज्ञान से यह हक़ीकत स्पष्ट हो जाती है कि वारिसों (उत्तराधिकारों) के हिस्सों में फर्क महिला या पुरुष होने पर आधारित नहीं है। बल्कि इसके पीछे कुछ ओर ही रणनीति और रहस्य व राज़ हैं जो उन लोगों पर छुपे हुए हैं जो कुछ स्थितियों में महिला और पुरुष के हिस्सों में अंतर को लेकर इस्लाम में महिला की पूर्ण योग्यता पर संदेह पैदा करते हैं।

इस्लामी विरासत (उत्तराधिकार) में वारिस (उत्तराधिकारी पुरुष हो या महिला) के हिस्सों में अंतर तीन चीज़ों पर आधारित है।

पहली चीज़: मृतक और वारिस (पुरूष हो या महिला) के बीच खूनी संबंध की नज़दीकी या दूरी है। यानी वारिस के लिंग (पुरूष या महिला) से हट कर इस्लाम ने यह ध्यान में रखा कि मृतक और वारिस के बीच संबंध जितना नज़दीक का होगा विरासत में भाग भी उतना ही बड़ा होगा और यह संबंध जितना दूर होगा विरासत में भाग भी उसी हिसाब से कम होगा। अतः विरासत (उत्तराधिकार) में वारिसों (उत्तराधिकारियों) के बीच स्त्री पुरूष भेद को महत्व नहीं दिया गया है।

दूसरी चीज़: वारिस के जीवन का दर्जा। अतः वह पीढ़ियां जो अभी जिंदगी शुरू कर रही हैं और जीवन की ज़िम्मेदारियों के बोझ उठाने की तैयारी में हैं उनका भाग ज़्यादातर उन पीढ़ियों की तुलना में अधिक होता है जो जीवन गुज़ार कर इस दुनिया से चल-बसने की तैयारी कर रही है और जिनकी पीठ पर से ज़िम्मेदारियों का बोझ हल्का होने लगा है या जिनकी ज़िम्मेदारियाँ दूसरों के सरों पर पड़ चुकी हैं। इस विषय में भी वारिसों (उत्तराधिकारियों) के लिंग यानी उनकी मर्दानगी और स्त्रीत्व के फ़र्क़ को बिल्कल नहीं देखा गया।

इस लिए मृतक की बेटी मृतक की माँ की तुलना में उसकी विरासत में अधिक भाग पाती है हालांकि दोनों ही स्त्री हैं। इसी तरह मृतक की बेटी मृतक के बाप की तुलना में अधिक हिस्सा पाएगी भले ही लड़की अभी इतनी छोटी हो कि दूध पीती है और अपने बाप को भी पहचानने की आयु को न पहुंची हो यहाँ तक कि अगर मृतक के धनदौलत बनाने में उसके बाप की सहायता भी शामिल रही हो तब भी मृतक के बाप को मृतक की बेटी की तुलना में कम भाग ही मिलेगा। केवल यही नहीं बल्कि उस समय अकेले बेटी आधा धन लेगी। इसी तरह बेटा भी अपने पिता की तुलना में अधिक हिस्सा पाता है जबकि दोनों ही पुरूष हैं।

तीसरी चीज़: वे माली ज़िम्मेदारियां जो दूसरों के लिए वारिस पर इस्लामी क़ानून की ओर से रखी गई हैं। यही एक स्तिथि है जिसमें पुरूष और महिला के बीच विरासत में अंतर किया गया है लेकिन यह भी स्त्री-पुरूष भेद पर आधारित नहीं है बल्कि माली ज़िम्मेदारियों के बोझ के अनुसार है। लेकिन ऐसा नहीं है कि इस अंतर के कारण महिलाओं पर किसी तरह का ज़ुल्म हुआ हो या उनके अधिकार में कमी आई हो बल्कि वे फायदे में ही रहती हैं। अतः अगर सभी वारिस रिश्तेदारी में बराबर हैं, और वे जीवन के दर्जे या पीढ़ी में भी सामान व बराबर हैं, जैसे: भाई और बहनें,ऐसी स्तिथि में इस्लामी क़ानून माली ज़िम्मेदारियों के बोझ को हिसाब में रखते हुए मीरास बांटता है जिसके कारण हिस्सों में अंतर हो जाता है लेकिन यह अंतर लिंग (पुरुष या महिला होने) के आधार पर नहीं होता है बल्कि माली ज़िम्मेदारी के आधार पर होता है। यही वजह है कि क़ुरआन ने पुरुष और महिला के हिस्सों में अंतर को सामान्य रूप से बयान नहीं किया बल्कि उसे केवल ऊपर उल्लेख की गयी स्थिति के साथ ही खास किया है। अतः आयत में बयान किया गया है कि :

﴿يُوصِيكُمُ اللَّهُ فِي أَوْلَادِكُمْ لِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ الْأُنْثَيَيْنِ﴾

(सूरह: अन-निसा: 11)

अनुवाद: अल्लाह तुम्हें तुम्हारे बच्चों के बारे में यह आदेश देता है कि (एक) बेटे का हिस्सा दो बेटियों के बराबर है।

यह नहीं कहा गया है कि: अल्लाह तुम्हें सभी वारिसों में यह आदेश देता है कि एक पुरुष का हिस्सा दो महिलाओं के बराबर है।

और विशेष रूप से इस स्थिति में बेटे और बेटी के हिस्सों में अंतर की हिकमत यह है कि भाई के ऊपर उसकी बीवी बच्चों की ज़िम्मेदारी होती है जबकि उसकी बहन (अगर शादी शुदा है) तो उसकी और उसके बच्चों की सारी ज़िम्मेदारी उसके अपने पति के ऊपर होती है। (और अगर शादी शुदा नहीं है तो कभी कभी उसकी ज़िम्मेदारी उसके उसी भाई के ऊपर होती है) इस तरह से वह -अपने भाई की तुलना में आधा पाने के बावजूद भी- अपने भाई से ज़्यादा फायदे में रहती है। क्योंकि उसके हिस्से का सभी धन सुरक्षित रहता है। जिससे वह अपने जीवन के कठोर समय में फायदा उठा सकती है। अतः इस स्थिति में पुरुष और महिला के हिस्सों में अंतर में एक बड़ी हिकमत है जिससे अधिक लोग नहीं जानते हैं।

याद रखें कि एक तरफ तो यह है जो ऊपर बयान हुआ और दूसरी तरफ यह कि अगर हम मीरास की स्थितियों में ग़ौर करते हैं तो एक ऐसी हक़ीक़त सामने आती है कि जिससे इस्लाम के दुश्मनों की आंखे खुली रह जाती हैं, वह यह कि

1: केवल चार स्थिति ऐसी हैं जिनमें महिला का हिस्सा पुरुष के हिस्से से आधा होता है।

2: जबकि इससे दुगनी स्थितियां ऐसी हैं जिनमें महिला को पुरूष के बराबर हिस्सा मिलता है।

3: और दस से अधिक स्थितियाँ ऐसी हैं जिनमें महिला को पुरूष से ज़्यादा हिस्सा मिलता है।

4: जबकि कुछ ऐसी भी स्थितियाँ हैं जिनमें महिला को तो हिस्सा मिलता है लेकिन पुरूष को नहीं मिलता।

यानी विरासत में केवल चार स्थितियाँ ऐसी हैं जिनमें महिला को पुरूष से आधा हिस्सा मिलता है जबकि इसकी तुलना में तीस से अधिक स्थितियाँ ऐसी हैं जिनमें महिला को पुरूष के बराबर या उससे ज़्यादा हिस्सा मिलता है या महिला को तो मिलता है लेकिन पुरूष को नहीं मिलता है।

यह परिणाम व नतीजा है मीरास की स्थितियों में ग़ौर करने का जो इस्लामी कसौटियों पर आधारित हैं ना कि वारिस (उत्तराधिकारी) के पुरूष और महिला होने पर। [1]

अतः इस स्पष्टता से इस्लाम में महिला की पूर्ण योग्यता पर उठाए गए संदेहों में से एक संदेह खत्म हो जाता है।

सभी प्रशंसाएं अल्लाह ही के लिए हैं।

---

[1] प्रोफेसर सलाहुद्दीन सुलत़ान " मीरास़ अल-मरअति व क़ज़यतुलमुसावात" (अरबी) (महिला की मीरास और बराबरी का मसला), पेज: 10,46, प्रकाशित (छापी हुई) क़ाहिरा, दार अल-नहडा, मिस्र, 1999 ईस्वी सिलसिला तनवीर ए इस्लामी

(2) महिला के फितना होने से संबंधित संदेह व ऐतराज़ का रद्द और जवाब और उसके शैतान की तरह होने का अर्थ

कुछ लोग यह एतराज़ करते हैं कि इस्लाम महिला को ़फितना क्यों घोषित करता है और उसे शैतान मानने का क्या मतलब है?

पहले प्रश्न का उत्तर देने से पहले हमें यह जानना बहुत ज़रूरी है कि शब्द " ़फितना " का क्या अर्थ है। क़ुरआन और ह़दीस़ में इस शब्द का प्रयोग बहुत से मानों में किया गया है। लेकिन ज़्यादातर इसका प्रयोग परीक्षा व इम्तिहान के माना में हुआ है। और मुझे नहीं पता कि जो लोग इस्लाम पर यह आरोप लगाते हैं कि वह औरत को फितना घोषित करता है वे कि शब्द "़फितना" के अर्थ को जानते भी हैं या नहीं? और वे क़ुरआन पढ़ते भी हैं या नहीं?

क्योंकि पवित्र क़ुरआन स्पष्ट रूप से हमें यह बताता है कि व्यक्ति अपने जीवन में जितने भी हालात का सामना करता है चाहे वे अच्छे हों या बुरे तो वे सब के सब ़फितना यानी परीक्षा और इम्तिहान हैं। अल्लाह तआ़ला इशाद फरमाता है।:

﴿وَنَبْلُوكُم بِالشَّرِّ وَالْخَيْرِ فِتْنَةً﴾

(सूरह: अल अंबिया:38)

अनुवाद: और हम तुम्हें अच्छाई और बुराई से परखते (आज़माते) हैं। (अनुवाद: कन्ज़ अल-इमान)

﴿الَّذِي خَلَقَ الْمَوْتَ وَالْحَيَاةَ لِيَبْلُوَكُمْ أَيُّكُمْ أَحْسَنُ عَمَلًا﴾

(सूरह: अल मुल्क: 2)

अनुवाद: वह जिसने मृत्यु और जीवन को बनाया ताकि तुम्हारी जांच हो कि तुम में से किस का कार्य ज़्यादा अच्छा है। (अनुवाद:कन्ज़ अल-इमान)

﴿وَاعْلَمُوا أَنَّمَا أَمْوَالُكُمْ وَأَوْلَادُكُمْ فِتْنَةٌ وَأَنَّ اللَّهَ عِندَهُ أَجْرٌ عَظِيمٌ﴾

(सूरह: अल अनफ़ाल: 28)

अनुवाद: और जान लो कि तुम्हारे धन (माल व दौलत) और तुम्हारी संतान (औलाद व बच्चे) केवल आज़माइश (परिक्षा) हैं। और यह कि अल्लाह ही के पास बहुत ज़्यादा स़वाब है। (अनुवाद: किताब तिबयान अल-क़ुरआन)

अतः महिला ़फितना है इसका मतलब यह है कि महिला पुरुष के लिए परीक्षा और इम्तिहान है कि क्या पुरुष अपने अल्लाह के आदेश को भूल कर अपना सारा समय महिला के पीछे बर्बाद करेगा? और महिला की वजह से अल्लाह की नाफरमानी करते हुए उसे बुरी नजऱ से देखेगा? और क्या व उसकी खूबसूरती व सुंदरता में फंसकर उसके साथ नजायज संबंध करेगा? या फिर वह अपने अल्लाह से डरेगा और महिला के साथ सिर्फ जायज़ तरह से ही संबंध करेगा जिसमें उसके अल्लाह की प्रसन्नता व रज़ा हो?

और इसी तरह से पुरुष भी महिला के लिए परीक्षा और इम्तिहान है। वह इस तरह से कि अगर कोई व्यक्ति बहुत ही सुंदर और धनी हो लेकिन वह शरिअ़त की पाबंदी नहीं करता है और ऐसा व्यक्ति किसी महिला को शादी का संदेश दे तो क्या वह महिला उसकी सुंदरता और दौलत में आकर उसे अपना पति मानेगी या उसे अपना प्रेमी बनाएगी और अल्लाह की नाफरमानी करेगी? या फिर वह अपने दिमाग में यह रखेगी कि वह एक परीक्षा और इम्तिहान में है इसीलिए वह सिर्फ ऐसे ही व्यक्ति से शादी करेगी जो शरीअ़त का पाबंद हो? और उससे सिर्फ जायज़ तरीके से ही संबंध बनाएगी।?

और इसी तरह से बच्चे भी अपने माता-पिता के लिए एक परीक्षा और इम्तिहान हैं। वह इस तरह से की क्या यह बच्चे अपने माता-पिता के लिए अल्लाह की आज्ञा का पालन करने में रुकावट बनेंगे या नहीं? और क्या उनके माता-पिता उनकी इस्लाम के तरीके पर तरबियत करेंगे या नहीं? या फिर वह उनकी तबीयत पश्चिमी (यूरोप) लोगों की तरह करेंगे जिनका इस्लाम से कोई संबंध नहीं है।

अतः हकीकत यह है कि महिला को .फितना यानी परीक्षा और इम्तिहान कहने में उसका का कोई अपमान नहीं है क्योंकि अल्लाह तआ़ला ने बच्चों को भी .फितना यानी परीक्षा और इम्तिहान बताया है। तो क्या इसमें बच्चों का अपमान है? बिल्कुल नहीं क्योंकि जब हमें यह पता है .फितने के माना इम्तिहान और परीक्षा व आज़माइश के हैं तो इस लिहाज़ से .फितना शब्द का प्रयोग सब के लिए सही है जैसा कि अल्लाह ताआ़ला ने इस आयत में इरशाद फरमाया:

﴿وَجَعَلْنَا بَعْضَكُمْ لِبَعْضٍ فِتْنَةً أَتَصْبِرُونَ﴾

(सूरह: अल- फ़ुरक़ान, आयत संख्या: 20)

अनुवाद: और हमने तुम में एक को दुसरे की जांच (आज़माइश) किया है। और ऐ लोगों! क्या तुम स़ब्र करोगे? (अनुवाद: कन्ज़ अल-इमान)

अतः हम में से हर एक अपने आसपास वाले के लिए आज़माइश व इम्तिहान (यानी .फितना) है।

दूसरा मुद्दा यह है कि क्या इस्लाम महिला को शैतान समझता है? बिल्कुल नहीं यह एक झूठा आरोप है क्योंकि अगर इस्लाम में महिलाओं के बारे में ऐसा दृष्टिकोण व नज़रिया होता तो यही पुरुषों के बारे में भी होता, क्योंकि अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इरशाद फ़रमाया:

" النساء شقائق الرجال. "

(अल-निसाठ शक़ाइक़ अल-रिजालि)

अनुवाद: महिलाएं और पुरुष -जन्म और विशेषताओं में- एक जैसे हैं।

इसीलिए अगर महिलाएं शैतान हैं तो पुरुष भी शैतान होंगे। क्योंकि पुरुष जन्म में और पैदाइश में महिलाओं की तरह ही हैं।

लेकिन हकीकत यह है कि यह एक झूठा आरोप है जिससे इस्लाम के दुश्मनों का मक़सद व लक्ष्य लोगों को इस्लाम से रोकना और दूर करना है क्योंकि अल्लाह तआ़ला ने सभी मनुष्यों को चाहें महिला हो या पुरुष सबको बराबर सम्मान दिया है। अतः अल्लाह तआ़ला इरशाद फ़रमाता है:

﴿وَلَقَدْ كَرَّمْنَا بَنِي آدَمَ﴾

(सूरह: अल-इसरा, आयत संख्या: 70)

अनुवाद: और बेशक हमने आदम के बच्चों को सम्मानित किया है।

इस्लाम में महिला को एक बड़ा स्थान प्राप्त है। और यह हर वह व्यक्ति जानता है जिसे महिलाओं से संबंधित इस्लाम का थोड़ा सा भी ज्ञान है।

हक़ीक़त में इन लोगों ने यह संदेह व एतराज़ (कि इस्लाम महिला को शैतान के रूप में देखता है।) एक ह़दीस़ शरीफ से लिया है जैसा कि ये हमेशा करते चले आए हैं कि ह़दीस़ों के ऐसे अर्थ बयान करते हैं कि जिनका ह़दीस़ों से कोई संबंध नहीं होता। एक सहीह़ ह़दीस़ शरीफ में जिसे इमाम मुस्लिम और दुसरे मुह़द्दस़ीन ने उल्लेख किया है कि अल्लाह के नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इरशाद फ़रमाया:

"إنّ المَرأَةَ تُقبِلُ في صُورةِ شَيطَانٍ وتُدْبِرُ في صُورَةِ شَيطَان فإذَا رأَى أحَدُكم امرأَةً أَعْجَبَتْهُ فَلْيَأتِ أهْلَهُ فإنّ ذلكَ يَرُدُّ مَا في نَفْسِه."

अनुवाद: बेशक (फ़ितने में डालने के एतबार से) महिला शैतान के रूप में सामने आती है और शैतान ही के रूप में वापस चली जाती है। तुम में से जब कोई किसी महिला को देखे जो उसे भा जाए (यानी अच्छी लग जाए) तो वह अपनी पत्नी के पास आ जाए। (यानी उस से संभोग व जिमाअ़ कर ले) निश्चित रूप से ऐसा करना उस इच्छा को दूर कर देगा जो उसके दिल में (उस महिला को देखकर पैदा हुई) है।

डॉ. अ़ब्दुल-हकीम सादिक़ अल- फ़ैतूरी कहते हैं: इस हदीस शरीफ में ऐसा कुछ भी नहीं है जिस से इनकार इनकार किया जाए और ऐसी कोई भी चीज नहीं है जिससे महिला का अपमान होता हो। बल्कि ह़दीस़ शरीफ का मतलब यह है कि अल्लाह तआ़ला ने महिलाओं अंदर ऐसी चीज़ रखी है कि पुरुष उनकी तरफ खिंचते हैं और उन्हें देखकर उन्हें आनंद मिलता है, इसलिए उनकी तरफ देखना गुनाह और फितना का कारण है। अतः महिला की सूरत पुरुष को ऐसे ही बहका देती है और उसे पाप करने पर उकसा देती है जैसे कि शैतान मनुष्यों को बहका देता है और उन्हें पाप करने पर उकसाता है। और ऐसा देखा भी जाता है।

अतः यह ह़दीस़ शरीफ महिलाओं को ह़िजाब न पहनने के परिणाम से चेतावनी देने के बारे में आई है। ताकि पुरुष उनके कारण और वे पुरुषों के कारण भटक न जाएं। तथा महिलाओं को देख कर पुरूषों के अंदर जो इच्छा पैदा होती उसका भी इस ह़दीस़ शरीफ में इ़लाज बताया गया है। वह यह कि वह व्यक्ति अपनी पत्नी के पास जाकर उससे सम्भोग (शरीरिक संबंध) बना ले।

क्योंकि ऐसा करने से उसके मन की इच्छा -अल्लाह के हुक्म से- खत्म हो जाएगी।

यह जो ऐतराज़ और संदेह हुए हैं ये इस्लाम में महिला की महानता के बारे में ज्ञान की कमी और इस गलत सोच की वजह से हुए हैं कि इस्लाम महिला की तुलना में पुरुष को ज्यादा सम्मान देता है और उसका पक्ष लेता। है जबकि कुछ ह़दीसों में पुरुष को भी उसके गलत काम की वजह से शैतान कहा गया है। अतः अल्लाह के नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने ऐसे व्यक्ति को शैतान कहा है जो अपनी पत्नी के साथ अपने शरीरिक संबंध की बातों को दूसरों से बताए। इसी तरह उस महिला को भी शैतान कहा है जो अपने पति के साथ शारीरिक संबंध की बातों को दूसरों से बयान करें। अल्लाह के नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इरशाद फरमाया:

“فإنما مثل ذلك مثل شيطان لقي شيطانة فغشيها والناس ينظرون.”

अनुवाद: क्योंकि उसका उदाहरण ऐसा है जैसे एक (नर) शैतान किसी (मादा) शैताना से मिला और लोगों के सामने ही (बीच रास्ते में) उसके साथ बदकारी (सेक्स) करने लगा।

इस ह़दीस़ को इमाम अह़मद ने उल्लेख किया है। (उद्धरण खत्म हुआ)

अतः शैतान के जैसा होना महिला या पुरुष होने पर आधारित नहीं है। बल्कि पुरूष या महिला के द्वारा किये गये काम पर है। और यह अ़रबी भाषा का एक अंदाज़ है। इसका मतलब यह नहीं है कि वह पुरुष या महिला वास्तव में शैतान हैं। जैसा कि कुछ लोग समझ बैठे हैं और इसी गलत समझ व सोच को फैलाने की कोशिश में लगे हुए हैं।

(3) महिला की आवाज सत्र होने के संबंधित ऐतराज़ का जवाब और उसके टेढ़ी पसली से पैदा होने का मतलब

हक़ीक़त के रूप में लोगों के बीच फैलने वाली अफवाहों में से एक अफवाह यह भी है कि इस्लाम महिला की आवाज को सत्र (यानी छुपाने की चीज) समझता है जिसका छुपाना जरूरी है। हम इस संदेह पर ज़्यादा देर बातचीत नहीं करेंगे क्योंकि इसकी कोई भी दलील नहीं है बल्कि इस अफवाह के रद्द में बहुत सी दलीलें मौजूद हैं। उदाहरण के लिए क़ुरआन पाक हमसे ह़ज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम की बेटियों की ह़ज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से बातचीत के बारे में बयान फरमाता है।

﴿وَلَمَّا وَرَدَ مَاءَ مَدْيَنَ وَجَدَ عَلَيْهِ أُمَّةً مِنَ النَّاسِ يَسْقُونَ وَوَجَدَ مِنْ دُونِهِمُ امْرَأَتَيْنِ تَذُودَانِ قَالَ مَا خَطْبُكُمَا قَالَتَا لا نَسْقِي حَتَّى يُصْدِرَ الرِّعَاءُ وَأَبُو َ شَيْخٌ كَبِيرٌ﴾

(सूरह: अल क़सस, 23)

अनुवाद: और जब मदयन के पास आया वहाँ लोगों के एक समूह को देखा कि वे अपने जानवरों को पानी पिला रहे हैं और उनसे उस तरफ दो औरतें देखीं कि अपने जानवरों को रोक रही जानवरों को रोक रही हैं। मूसा ने उनसे पूछा कि तुम दोनों का क्या मामला है? वे बोलीं हम तब तक पानी नहीं पिलाते जब तक की सभी चरवाहे अपने अपने जानवरों को पानी पिला कर वापस ना ले जाएं और हमारे पिता बहुत बूढ़े हैं।

और उनमें से एक ने जो ह़ज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से जो कहा उसको पवित्र क़ुरआन यूँ बयान करता है।

﴿إِنَّ أَبِي يَدْعُوكَ لِيَجْزِيَكَ أَجْرَ مَا سَقَيْتَ لَنَا﴾

(सूरह: अल क़सस, 25)

मेरे पिता आपको बुला रहे हैं ताकि आपको उस काम की मज़दूरी दें जो आपने हमारे जानवरों को पानी पिलाया है।

महिला की आवाज़ अगर सत्र है तो हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम की बेटियों ने हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से क्यों बात की? तथा महिला को बोलने और बातचीत करने से कैसे रोका जा सकता है जबकि इस्लाम ने उसे बेचने और खरीदने और भलाई का आदेश देने और बुराई से रोकने की इजाज़त दी है जैसा कि इस आयत में है।

﴿وَالْمُؤْمِنُونَ وَالْمُؤْمِنَاتُ بَعْضُهُمْ أَوْلِيَاءُ بَعْضٍ ۚ يَأْمُرُونَ بِالْمَعْرُوفِ وَيَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ﴾

(सूरह:तौबा, आयत संख्या: 71)

अनुवाद: और मोमिन पुरुष और मोमिन महिलाएं एक दूसरे के दोस्त हैं भलाई का आदेश देते हैं और बुराई से रोकते हैं।

तथा उल्लेख है की अमीरुल मोमिनीन हज़रत उ़मर रदि़यल्लाहु अ़न्हु ने जब महर को सीमित करना चाहा तो बीच मस्जिद में से एक महिला खड़ी हुई और उन्हें पवित्र कुरान की आयत का पालन करने को कहा और बोली आप कैसे महर को सीमित करना चाहते हैं जबकि अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है।

﴿وَآتَيْتُمْ إِحْدَاهُنَّ قِنطَارًا فَلَا تَأْخُذُوا مِنْهُ شَيْئًا﴾

(सूरह: अल-निसा, आयत संख्या: 20)

अनुवाद: (और अगर तुम एक पत्नी को दूसरी पत्नी से बदलना चाहते हो और) तुम उन में से एक को (महर मैं) ढेरों माल दे चुके तो उसमें से कुछ भी (वापस) ना लो। तो हजरत उ़मर रदि़यल्लाहु अ़न्हु ने अपना प्रसिद्ध कथन कहा: महिला ने सही कहा और उ़मर से गलती हुई।

इस्लाम में महिला के स्थान के बारे में यहाँ एक बहुत ही प्यारी ह़दीस़ ए पाक सुना कर हम अपनी बात खत्म करते हैं और वह यह है कि ह़ज़रत ए उम्मे सलमा बिंते अबी उमय्यह रद़ियल्लाहु अ़न्हा से उल्लेख है कि जब अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहू अ़लैहि वसल्लम हिजरत के लिए निकले तो अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की बेटी ह़ज़रत ज़ैनब रद़ियल्लाहु अ़न्हा ने अपने पति अबु अल-अ़ास बिन अल-रबीअ जो अभी तक गैर मुस्लिम थे से इजाज़त व अनुमति माँगी के वह भी अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के साथ जाएंगी। अबु अल-अ़ास ने उन्हें इजाज़त देदी। वह आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के पास आ गईं। फिर जब अबु अल-अ़ास मदीने आए तो ह़ज़रत ज़ैनब को संदेश भेजा कि वह अपने पिता से मेरे लिए अमान माँगें। वह बाहर निकलीं और कमरे के दरवाजे से सर निकाल कर बोलीं जबकि अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम लोगों को सुबह की नमाज़ पढ़ा रहे थे कहने लगीं: ऐ लोगों! में ज़ैनब अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम बेटी हूँ। मैंने अबु अल-आस को पनाह व शरण दी है। जब अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम नमाज़ से फारिग हुए तो आपने फरमाया: ऐ लोगों! जब तक तुमने यह आवाज़ नहीं सुनी थी मुझे (भी) अबु अल-अ़ास के बारे में पता नहीं था। और मुसलमानों का आम आदमी भी पनाह दे सकता है।

इस्लाम ने महिला को जो बुलंद स्थान और सम्मान दिया है उसे कौन नहीं जानता सिवाय उन कुछ जाहिल लोगों के जो इस्लाम पर आरोप लगाते हुए यह अफवाह फैलाते हैं कि इस्लाम महिलाओं की तोहीन करता है और उन्हें सम्मान नहीं देता। ऐसे लोगों को तो महिलाओं के बारे में अपने शर्मनाक विचारों से शर्मिंदा होकर जमीन में दफन हो जाना चाहिए जिन्होंने महिला की

सम्मान को छीन लिया है और उसको बेचा और खरीदा जाने वाला तिजारत का एक सामान बनाकर रख दिया है। अगर हम पश्चिम में महिला की स्थिति पर गौर करें तो हमें उसकी स्थिति पर बहुत तरस आता है क्योंकि हवस के पुजारियों ने उसे केवल अपनी हवस पूरी करने का एक ज़रिया बना रखा है। आजादी के बहाने उसे नंगापन और कला के बहाने उसे अपने इज़्ज़त को बेचने की तरफ ढकेल दिया है। तो इसमें महिला की क्या इज़्ज़त है? यह कैसा सम्मान है?

महिला के बारे में यहाँ पर एक और मनगढ़ंत संदेह व एतराज़ है जो सभी संदेहों व एतराज़ो की तरह सत्य के बयान के बाद भंग हो जाता है। वह मनगढ़त संदेह यह है कि इस्लाम समझता है कि महिला टेढ़ी पतली से पैदा की गई है।

आइए इसकी हक़ीक़त को जानने के लिए एक हदीस ए पाक सुनते हैं। हज़रत इमाम बुखारी उल्लेख करते हैं कि नबी ए करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इरशाद फरमाया:

مَن كانَ يُؤْمِنُ ـِّ واليَومِ الآخِرِ فلا يُؤْذِي جارَهُ، واسْتَوْصُوا لنِّساءِ خَيْرًا، فإنَّهُنَّ خُلِقْنَ مِن ضِلَعٍ، وإنَّ أعْوَجَ شيءٍ في الضِّلَعِ أعْلاهُ، فإنْ ذَهَبْتَ تُقِيمُهُ كَسَرْتَهُ، وإنْ تَرَكْتَهُ لَمْ يَزَلْ أعْوَجَ، فاسْتَوْصُوا لنِّساءِ خَيْرًا.

अनुवाद: जो व्यक्ति अल्लाह और आखिरत के दिन ईमान रखता हो वह अपने पड़ोसी को तकलीफ ना पहुंचाए। और महिलाओं के साथ अच्छा व्यवहार करो क्योंकि उन्हें पसली से पैदा किया गया है। और पसली में सबसे टेढ़ा भाग सबसे ऊपर वाला भाग होता है। अगर तुम उसे सीधा करने की कोशिश करोगे तो तुम उसे तोड़ दोगे और अगर उसे उसके हाल पर छोड़ दोगे तो वह टेढ़ी हि रहेगी। लिहाज़ा उनके साथ अच्छा व्यवहार करो।

हम इस ह़दीस़ शरीफ से क्या सीखते हैं

पहली चीज़: पैगंबर सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने यह नहीं कहा कि महिला को टेढ़ी पसली से पैदा किया गया है जैसा कि कुछ लोग सोचते हैं। बल्कि यह बताया है कि वह पसली से पैदा हुई है।[1] और यह एक अनदेखी चीज की खबर है जिसे अल्लाह तआ़ला ने अपने पैगंबर सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम को बताया है जैसा कि इसके अलावा बहुत से दूसरी अनदेखी चीज़ों को बताया है जिन पर हर मोमिन ईमान रखता है। लिहाज़ा इसमें औरत का कोई अपमान नहीं है। उदाहरण के तौर पर जब अल्लाह तआ़ला ने हमें यह बताया कि उसने इंसान को मिट्टी से पैदा किया है तो क्या इसका मतलब यह है कि इस्लाम इंसान का अपमान करता है? बिल्कुल नहीं बल्कि यह केवल एक अनदेखी बात की खबर है जिसे अल्लाह तआ़ला के सिवा कोई नहीं जानता

---

[1]) इस शब्द "टेढ़ी" के साथ भी एक रिवायत मिलती है। त़िबरानी की किताब "अल-मुअ़जम अल-ओसत़" में ह़ज़रत ए अबुहुरैराह रद़ियल्लाहु अ़न्हु से उल्लेख है कि अल्लाह के नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इरशाद फ़रमाया:

"إِنَّمَا خُلِقَتِ الْمَرْأَةُ مِنْ ضِلَعٍ أَعْوَجَ،فَلَنْ تُصَاحِبَهَا إِلا وَفِيهَا عِوَجٌ، فَإِنْ ذَهَبْتَ تُقِيمُهَا كَسَرْتَهَا، وَكَسْرُكَ لَهَا طَلاقُهَا"-

अनुवाद: महिला को टेढ़ी पसली से पैदा किया गया है। लिहाज़ा जब तुम उसके साथ रहोगे तो टेढ़ापन देखोगे। तो अगर तुम उसे सीधा करने की कोशिश करोगे तो तोड़ दोगे और उसका तोड़ना तलाक है (अल-मुअ़जम अल-ओसत़, ह़दीस़ संख्या: 283)

लिहाज़ा शब्द "टेढ़ी" को इस रिवायत के अनुसार सहीह़ भी मान लिया जाए तो भी हरगिज़ इसमें महिला का अपमान नहीं है। बल्कि इससे पुरूषों को इस बात की वसीयत करना मकसूद है कि वे महिलाओं के साथ अच्छा व्यवहार करें, और उनके साथ नरमी, रह़म दिली, सब्र और बर्दाश्त से पेश आएं और उनकी थोड़ी सी किसी बात से परेशान होकर उनको तलाक देने में जल्दबाज़ी से काम ना लें।

और हमारा काम उस पर विश्वास रखना है। दूसरी चीज़: नबी ए करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि का इस हक़ीक़त के बारे में बताना कि महिला को हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम की पसली से पैदा किया गया है जैसा कि कुरआन ए पाक में इस बात को स्पष्ट किया गया है। अतः उसमें है:

﴿ يَـٰٓأَيُّهَا النَّاسُ ٱتَّقُوا رَبَّكُمُ الَّذِي خَلَقَكُم مِّن نَّفْسٍ وَاحِدَةٍ وَخَلَقَ مِنْهَا زَوْجَهَا ﴾

(सूरह: अल- निसा, आयत संख्या:1)

अनुवाद: ऐ लोगों! अपने रब से डरो जिसने तुम्हें एक जान से पैदा किया और उसी में से उसका जोड़ा बनाया। (अनुवाद कंज़ुल ईमान)

तो इस खबर से हमें पुरुष और महिला के बीच के रिश्ते की हक़ीक़त का ज्ञान होता है और यह पता चलता है कि उनके बीच का यह रिश्ता एक मजबूत रिश्ता है क्योंकि महिला पुरुष से है और पुरुष महिला से है जैसा कि अल्लाह तआ़ला ने इरशाद फरमाया:

﴿ بَعْضُكُم مِّنۢ بَعْضٍ ﴾

(सूरह: आले इ़मरान, आयत संख्या: 195)

अनुवाद: तुम आपस में एक हो। (अनुवाद कंज़ुल ईमान)

तथा यह ह़दीस़ ए पाक पुरुषों को महिलाओं के साथ अच्छा व्यवहार करने, उनके साथ भलाई से पेश आने और उनके साथ सब्र से काम लेने की वसियत के बारे में आई है। क्योंकि महिला फितरती तौर पर जज़्बाती होती है।

अत: हम यहाँ आयत ए करीमा:

﴿ يَـٰٓأَيُّهَا النَّاسُ ٱتَّقُوا رَبَّكُمُ الَّذِي خَلَقَكُم مِّن نَّفْسٍ وَاحِدَةٍ وَخَلَقَ مِنْهَا زَوْجَهَا ﴾:

की तफ़सीर में ह़ज़रत शैख शअ़रावी रह़मतुल्लाहि अ़लैहि की बहुत ही प्यारी बात बयान करना चाहते हैं, वह कहते हैं:

अल्लाह तआ़ला ने इरशाद फ़रमाया: وَجَعَلَ مِنْهَا (और उसने उससे बनाया) तो अगर महिला पसली से पैदा हुई हो तो फिर शब्द "मिन" तबईज़िया यानी "कुछ हिस्से के बयान के लिए" है और अगर वह ह़ज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम की तरह पैदा हुई हो तो शब्द "मिन" बयान के लिए है। यानी उसी की जिन्स से है और उसी तरह उसे बनाया जैसा उसे बनाया। तो यह ऐसे ही होगा जैसा कि अल्लाह तआ़ला ने इस आयत ए करीमा में इरशाद फरमाया: ﴿هُوَ الَّذِي بَعَثَ فِي الْأُمِّيِّينَ رَسُولًا مِنْهُمْ﴾ (वही है जिसने अनपढ़ों में उन्हीं में से एक रसूल भेजा)

यानी उन्हीं की तरह एक मानव रसूल भेजा। और एक दूसरी जगह ह़ज़रत शेख शअराबी ने अपने एक सबक़ के दौरान फरमाया: बेशक अल्लाह तआ़ला हर चीज को बनाने से पहले उसे और उसके ज़रिए किए जाने वाले काम को अच्छी तरह से जानता है। लिहाज़ा अल्लाह तआ़ला हर चीज को ऐसी विशेषतओं के साथ बनाता है जो उसके मकसद और काम को अंजाम देने में उसकी मदद कर सकें। कभी-कभी कुछ चीज़ों को देखकर आपके दिमाग में यह ख्याल आता होगा कि ये चीज़ें किसी काम की नहीं हैं या यह आता होगा कि अगर इस चीज़ को इस तरीके से बनाया जाता तो अच्छा होता। लेकिन मामला ऐसा नहीं है। उल्लेख किया जाता है कि एक व्यक्ति अल्लाह तआ़ला की बनाई हुई चीज़ों में सोच विचार करने के बाद बोला इससे अच्छे और बेहतर तरीके से कोई पैदा कर ही नहीं सकता। तथा एक लोहार ने लोहे की सीधी छड़ी को लेकर उसे टेढ़ा कर दिया यह देखकर उसके बेटे ने पूछा सीधी छड़ी को मोड़ कर क्यों टेढ़ा कर दिया उसे सीधा क्यों नहीं रहने देते? उसके पिता ने जवाब दिया छड़ी मुड़कर ही अपना काम अंजाम दे सकती है उसके सीधा रहने से उसका काम नहीं हो

सकता। उदाहरण के तौर पर हुक, दरांतियां, हंसिये और पेड़ों से फल तोड़ने वाले औज़ार अगर सीधे होते तो वे अपना काम अंजाम नहीं दे सकते थे। अब इस की रोशनी में हम उस हदीस ए पाक को बेहतर तौर पर समझ सकते हैं जिसमें नबी ए करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने महिलाओं के बारे में ऐसा फरमाया कि उन्हें पसली से पैदा किया गया है और पसली में सबसे टेढ़ा हिस्सा सबसे ऊपर वाला हिस्सा होता है। अगर तुम उसे सीधा करने की कोशिश करोगे तो तुम उसे तोड़ दोगे और अगर उसे उसके हाल पर रहने दोगे तो वह टेढ़ी ही रहेगी। लिहाज़ा उनके साथ अच्छा व्यवहार करो। अगर आप अपने सीने की पसलियों में गौर करेंगे तो आपको पता चलेगा कि यह पसलियां आपके दिल और फेफड़ों की सुरक्षा करती हैं अगर यह टेढ़ी ना हों तो ये आपके दोनों महत्वपूर्ण अंगों -दिल और फेफड़ों- की सुरक्षा नहीं कर पाएंगी। लिहाज़ा उनका टेढ़ापन हमदर्दी और सुरक्षा के लिए है। और इसी तरह जिंदगी महिला का किरदार है। उदाहरण के तौर पर वह ह़म्ल (गर्भावस्था) के दौरान अपने उस बच्चे के साथ बड़ी नरमी से काम लेती है और उसकी हिफाज़त करती है और जब वह उसे जन्म देती है तो उस पर और भी ज्यादा मेहरबान और रह़म दिल हो जाती है।

लिहाज़ा नबी ए करीम सल्लल्लाहू अ़लैहि वसल्लम का औरतों की यह विशेषता व हकीकत बयान करना उनके के हक़ में कोई गाली नहीं है और ना ही इसमें उनका कोई अपमान है क्योंकि औरत की फितरत में इस तरह का टेड़ापन उसकी जिंदगी के मकसद को पूरा करने के लिए जरूरी चीज़ है। इसीलिए आप देखते हैं कि महिला के अंदर हमदर्दी और रहम दिली का पहलू उसकी अक़्ल और बुद्धि के पहलू से ज़्यादा होता है क्योंकि महिला को उसके जीवन में इसी तरह की फितरत की ज़्यादा आवश्यकता व जरूरत होती है

जबकि पुरुषों के अंदर बुद्धि का पहलू दया व रहम दिली के पहलू से ज्यादा रहता है ताकि वे जीवन में अपना मकसद अंजाम दे सकें। क्योंकि उनके कंधों पर जीवन का भोज रहता है। अल्लाह तआ़ला ने हर एक चीज को एक खास काम के लिए बनाया है और हर एक का अपना एक काम है। और जिसको जिस तरह बनाया है वही उसके लिए सबसे ज्यादा बेहतर है भले ही देखने में हमें उसमें कोई कमी दिखाई दे।

(4) मुस्लिम महिला का गैर मुस्लिम पुरुष से विवाह करने कि मनादी व रुकावट पर संदेह व ऐतराज़ और उसका रद्द

इस्लाम मुसलमान पुरुष को किताबिया (यानी ईसाई या यहूदी) महिला से विवाह करने की इजाजत देता है जबकि मुस्लिम महिला को ऐसा करने (यानी ईसाई या यहूदी पुरुष से शादी करने) से मना करता है ऐसा क्यों है?

यह एक अच्छा सवाल है लेकिन इसका जवाब देने से पहले हम इस बात पर जोर देना चाहेंगे कि इस्लाम ने मुस्लिम महिला को गैर-मुस्लिम पुरुष से विवाह करने से मना किया है। अल्लाह तआ़ला क़ुरआन ए पाक में इरशाद फरमाता है।:

﴿وَلَا تُنكِحُوا الْمُشْرِكِينَ حَتَّىٰ يُؤْمِنُوا ۚ وَلَعَبْدٌ مُّؤْمِنٌ خَيْرٌ مِّن مُّشْرِكٍ وَلَوْ أَعْجَبَكُمْ ﴾

(सूरह: अल-बक़रह, आयत संख्या: 221)

अनुवाद: और ऐ मुसलमानों! अपनी महिलाओं को मुशरिकों (यानी गैर मुस्लिमों) के विवाह में ना दो जब तक कि वे ईमान ना लाएं। और बेशक मुस्लिम गुलाम मुशरिक (गैर-मुस्लिम) से अच्छा है भले ही वह तुम्हें भाता हो। (अनुवाद कंज़ुल ईमान)

गैर-मुस्लिम पुरुष से मुसलमान महिला की शादी की मनादी और रुकावट वास्तव में इस हक़ीक़त पर आधारित है कि आमतौर पर महिला अपने पति का पालन करती है। इसी तरह आमतौर पर पति का अपनी पत्नी पर उससे कई गुना ज़्यादा असर पड़ता है जितना कि एक पत्नी का उसके पति पर पड़ता है। और वास्तव में इस्लाम एक ऐसा धर्म है जिसके बहुत से मकसद हैं जिनमें से दो निम्नलिखित मकसद है भी हैं।

पहला मकसद: यह है कि लोग स्पष्ट तौर पर इस इस्लाम धर्म को जान लें जिससे उन्हें यह यकीन हो जाए कि वही एक सच्चा धर्म है। यही कारण है कि उसने मुस्लिम पुरुष को गैर-मुसलिम महिला से विवाह करने की इजाजत दी है इस शर्त के साथ कि वह किताब वालों में से हो यानी यहूदी या इसाई हो। क्योंकि वह (यानी यहूदी और ईसाई महिला) कम से कम अल्लाह और वह़ी (अल्लाह की तरफ से पैगंबर को संदेश) पर तो ईमान रखती है भले ही वह गलत तरीके से विश्वास रखती है। इसीलिए वह दूसरों की तुलना में इस्लाम को आसानी से समझ सकती है। विशेष रूप से जब उसकी शादी एक ऐसे सच्चे पक्के मुसलमान से हो जाए जो अपने कहने और करने में इस्लामी शिक्षाओं का पाबंद हो। क्योंकि जब वह उसके अच्छे इस्लामी अखलाक़ व आदाब और अपने साथ उसके अच्छे व्यवहार को देखेगी तो यह उसके इस्लाम में प्रवेश का कारण भी हो सकता है। लेकिन अगर वह अपने धर्म पर भी रहना चाहे तो उसे उसका पूरा अधिकार है। और किसी को भी यह अधिकार नहीं कि वह उसे धर्म बदलने के लिए मजबूर करे। अल्लाह तआ़ला इरशाद फरमाता है।:

﴿لَا إِكْرَاهَ فِي الدِّينِ﴾

(सूरह: अल- बक़रह, आयत संख्या: 256)

अनुवाद: धर्म में कोई जबरदस्ती नहीं।

दूसरा मकसद: यह है कि इस्लाम अपने अनुयायियों यानी मानने वालों को अपने से जोड़े रखना चाहता है। यही कारण है कि वह उन्हें ऐसी चीज से हमेशा दूर रखता है जो भी उनके ईमान पर गलत असर डाले। इस तरह की चीज़ों को धर्म में फ़ितना (यानी आज़माइश) कहा जाता है। अल्लाह तआ़ला इरशाद फरमाता है।:

﴿ وَالْفِتْنَةُ أَكْبَرُ مِنَ الْقَتْلِ﴾

(सूरह: अल-बक़रह, आयत संख्या:217)

अनुवाद: और फितना (और फसाद) क़त्ल (हत्या) से (भी) बढ़कर है।

वास्तव में इस तरह के फ़ितने कई प्रकार के हो सकते हैं। उदाहरण के तौर पर किसी मुस्लिम को उसका अ़क़ीदा यानी विश्वास बदलने के लिए तकलीफ दिया जाना और हमारी वाली भी सूरत हो सकती है यानी मुसलमान महिला की ग़ैर-मुस्लिम पुरुष से शादी करवा देना। अब सवाल यह है कि ग़ैर-मुस्लिम पुरुष से मुसलमान महिला की शादी क्यों मना है? तो उसका जवाब वही है जो ऊपर बयान हो चुका है कि आमतौर पर पति का असर उसकी पत्नी पर ज्यादा पड़ता है और बहुत संभव है की इस ग़ैर-मुस्लिम पति का उसकी मुसलमान पत्नी पर गलत असर पड़ जाए जिसके कारण उसकी पत्नी अपना इस्लाम धर्म छोड़ दे या कम से कम वह इस्लामी शिक्षाओं की पाबंदी न कर सके। और ऐसा सब कुछ इस्लाम अपने अनुयायियों और मानने वालों के लिए कभी गवारा नहीं करता। बल्कि इस्लाम तो उन्हें हमेशा एक ऐसा उचित और मुनासिब माहौल देने की कोशिश करता है जिसमें वे उसकी शिक्षाओं पर अमल कर सकें। इसीलिए इस्लाम ने मुसलमान महिला को मुसलमान पुरुष के साथ साथ एक अच्छा व्यक्ति चुनने पर भी जोर दिया है। और इस बात पर भी जोर दिया है की वह ऐसे व्यक्ति को चुने जो शरीअ़त का पाबंद हो और ऐसे व्यक्ति को कुबूल व स्वीकार ना करे जो इस्लामी शिक्षाओं में सुस्ती करता हो। यह सब इस वजह से है ताकि मुस्लिम महिला अपने धर्म और उसकी शिक्षाओं को मजबूती से पकड़ी रहे और हर गलत असर से दूर रहे।

(5) इस्लाम और दूसरे धर्मों में महिला का उत्तराधिकार (विरासत)

इस्लाम के दुश्मन अच्छी तरह से जानते है कि समाज को सुधारने में और धर्म की सेवा में मुस्लिम महिला का महान किरदार है। इसलिए वे मुस्लिम महिलाओं और उनके अखलाक़ और किरदार को तबाह करने की कोशिश में लगे हैं। क्योंकि जब एक पुरूष ख़राब हो जाए तो उसका असर खुद उसी तक सीमित रहता है। लेकिन यदि एक स्त्री ख़राब हो जाएगी तो पूरा परिवार ख़राब हो जाता है। और इस युद्ध के सबसे महत्वपूर्ण विषयों में यह शामिल है कि मुस्लिम महिलाओं को यह विश्वास दिलाकर कि इस्लामी क़ानून उनकी स्थिति को घटाता और उनका अपमान करता है और उनके अधिकार में ज़ुल्म से काम लेता है। उन्हें यह विश्वास दिलाकर इस्लामी क़ानून से दूर कर दिया जाए और उनके दिलों में इस्लाम के प्रति नफरत बैठा दी जाए। और इस नापाक इरादे व मकसद को पूरा करने के लिए जो झूठी अफवाहें फैला रहे हैं उन्ही में से एक यह भी है कि इस्लाम ने मीरास के अधिकार में पुरुष को महिला से ऊपर रखा है, वह इस तरह से कि इस्लाम मीरास़ (उत्तराधिकार) में महिला को हमेशा पुरूष की तुलना में आधा हिस्सा देता है। वास्तव में यह इस्लाम पर एक झूठा आरोप है। सच तो यह है कि इस्लाम के सारे व्यवहार न्याय के नियम पर आधारित हैं। और वह नियम यह है कि "इस्लाम सदा समानता एक जैसी चीज़ों में बराबरी करता है और असमानता और अलग अलग चीज़ों में अंतर करता है।" और यही न्याय का सही तराज़ू है जिसकी मानव को ज़रूरत है, ताकि उसे सुकून प्राप्त हो सके और उसका जीवन अच्छा हो।

विरासत के क्षेत्र में इस्लाम ने वारिस के प्रकार और स्त्री-पुरूष भेद को बुनियाद नहीं बनाया है। हाँ इस्लाम ने इस मामले में तीन विषयों को ध्यान में रखा और उन्हीं की बुनियाद पर विरासत को बांटा है।

पहला विषयः मृतक और वारिस (पुरूष हो या महिला) के बीच खूनी संबंध की नज़दीकी या दूरी कितनी है। यानी वारिस के लिंग (पुरूष या महिला) से हट कर इस्लाम ने यह ध्यान में रखा कि मृतक और वारिस के बीच संबंध जितना नज़दीक का होगा विरासत में भाग भी उतना ही ज़्यादा होगा और यह संबंध जितना दूर होगा विरासत में भाग भी उसी हिसाब से कम होगा। अतः विरासत (उत्तराधिकार) में वारिसों (उत्तराधिकारियों) के बीच स्त्री-पुरूष भेद को महत्व नहीं दिया गया है। इसीलिए मृतक की बेटी मृतक के पिता और उसकी माँ की तुलना में उसकी विरासत में अधिक भाग पाती है।

दूसरा विषयः वारिस के जीवन का दर्जा। अतः वह पीढ़ियाँ जो अभी जिंदगी शुरू कर रही हैं और जीवन की ज़िम्मेदारियों के बोझ उठाने की तैयारी में हैं उनका भाग ज़्यादातर उन पीढ़ियों की तुलना में अधिक होता है जो जीवन गुज़ार कर इस दुनिया से चल-बसने की तैयारी कर रही है और जिनकी पीठ पर से ज़िम्मेदारियों का बोझ हल्का होने लगा है या जिनकी ज़िम्मेदारियां दूसरों के सरों पर पड़ चुकी हैं। इस विषय में भी वारिसों (उत्तराधिकारियों) के लिंग यानी उनकी मर्दानगी और स्त्रीत्व के फ़र्क़ को बिल्कल नहीं देखा गया। इसीलिए मृतक की बेटी मृतक की माँ की तुलना में उसकी विरासत में अधिक भाग पाती है हालांकि दोनों ही स्त्री हैं। इसी तरह मृतक की बेटी मृतक के बाप की तुलना में अधिक हिस्सा पाएगी भले ही लड़की अभी इतनी छोटी हो कि दूध पीती है और अपने बाप को भी पहचानने की आयु को न पहुंची हो यहाँ तक कि अगर मृतक के धनदौलत बनाने में उसके बाप की सहायता भी शामिल रही हो तब भी मृतक के बाप को मृतक की बेटी की तुलना में कम भाग ही मिलेगा। केवल यही नहीं बल्कि उस समय बेटी अकेले आधा धन लेगी। इसी

तरह बेटा भी अपने पिता की तुलना में अधिक हिस्सा पाता है जबकि दोनों ही पुरूष हैं।

तीसरा विषय: वे माली ज़िम्मेदारियाँ जो दूसरों के लिए वारिस पर इस्लामी क़ानून की ओर से रखी गई हैं। यही एक स्तिथि है जिसमें पुरूष और महिला के बीच विरासत में अंतर किया गया है लेकिन यह भी स्त्री-पुरूष भेद पर आधारित नहीं है बल्कि माली ज़िम्मेदारियों के बोझ के अनुसार हैं। लेकिन ऐसा नहीं है कि इस अंतर के कारण महिलाओं पर किसी तरह का ज़ुल्म हुआ हो या उनके अधिकार में कमी आई हो बल्कि वे फायदे में ही रहती हैं। अतः अगर सभी वारिस रिश्तेदारी में बराबर हैं, और वे जीवन के दर्जे या पीढ़ी में भी सामान व बराबर हैं, जैसे: भाई और बहनें, ऐसी स्तिथि में इस्लामी क़ानून माली ज़िम्मेदारियों के बोझ को हिसाब में रखते हुए मीरास बांटता है जिसके कारण हिस्सों में अंतर हो जाता है लेकिन यह अंतर लिंग (पुरुष या महिला होने) के आधार पर नहीं होता है बल्कि माली ज़िम्मेदारी के आधार पर होता है। और विशेष रूप से इस स्थिति में बेटे और बेटी के हिस्सों में अंतर की हिकमत यह है कि भाई के ऊपर उसकी बीवी बच्चों की ज़िम्मेदारी होती है जबकि उसकी बहन (अगर शादी शुदा है) तो उसकी और उसके बच्चों की सारी ज़िम्मेदारी उसके अपने पति के ऊपर होती है। (और अगर शादी शुदा नहीं है तो कभी कभी उसकी ज़िम्मेदारी उसके उसी भाई के ऊपर होती है) इस तरह से वह -अपने भाई की तुलना में आधा पाने के बावजूद भी- अपने भाई से ज़्यादा फायदे में रहती है। क्योंकि उसके हिस्से का सभी धन सुरक्षित रहता है। जिससे वह अपने जीवन के कठोर समय में फायदा उठा सकती है। यही वजह है कि क़ुरआन ने पुरुष और महिला के हिस्सों में अंतर को सामान्य रूप

से बयान नहीं किया बल्कि उसे केवल ऊपर उल्लेख की गयी स्थिति के साथ ही खास किया है। अतः आयत में बयान किया गया है कि:

﴿يُوصِيكُمُ اللَّهُ فِي أَوْلادِكُمْ لِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ الأُنْثَيَيْنِ﴾

(सूरह: अन-निसा: 11)

अनुवाद: अल्लाह तुम्हें तुम्हारे बच्चों के बारे में यह आदेश देता है कि (एक) बेटे का हिस्सा दो बेटियों के बराबर है।

यहाँ जो इस्लामी क़ानून ने फ़र्क़ किया है वह सामानों (एक जैसों) के बीच नहीं किया है बल्कि आसमानों (अलग अलग) के बीच किया है। और असमानों के बीच फर्क़ करना तो ज़रूरी है।

तथा इस्लामी क़ानून पुरूषों को शादी के समय पत्नी को महर देने का पाबंद किया है हालांकि महिलाओं को पुरूषों के लिए किसी चीज़ के भी देने का पाबंद नहीं किया है।

साथ ही पुरूषों को ही वैवाहिक घर का बंदोबस्त करना है और उसके साज़ोसामान लाना है। और फिर महिलाओं और उनके बच्चों पर ख़र्च करना भी पुरूषों की ही ज़िम्मेदारी है। इसी तरह जुर्मानों को भरने का काम भी पुरूषों का है। जैसे किसी की हत्या करने के कांड में या इस तरह के दूसरे कांडों में यहाँ तक कि तलाक़ की घटना में भी इस्लामी क़ानून महिलाओं को अकेले जीवन के बोझ का सामना करने के लिए नहीं छोड़ता है बल्कि पुरूष को पाबंद किया है कि उसे कुछ दिन गुज़र-बसर करने का ख़र्च दे जब तक महिला की दूसरी शादी न हो जाए। रिश्तेदारी और जीवन के दर्जे में बराबर होने की स्तिथि में इन्हीं ज़िम्मेदारियों और माली बोझों के कारण इस्लाम ने पुरूष को स्त्री की

तुलना में दुगना हिस्सा दिया है और साथ ही उसे स्त्री पर ख़र्च करने और उसकी देखरेख का पाबंद भी किया है।

इस से पता चला कि इस्लामी क़ानून ने मीरास में महिलाओं को एक विशेष स्थान और ख़ास महत्व व दर्जा दिया है।

और यह विषय (माली ज़िम्मेदारियाँ बोझ के अनुसार पुरूष को स्त्री की तुलना में दुगना हिस्सा दिया जाना) केवल चार स्थितियों तक ही सीमित है:

(1) मृतक के दोनों प्रकार (स्त्री-पुरूष) बच्चों के रहने की स्तिथि में जैसा कि पवित्र क़ुरआन में आदेश है:

﴿يُوصِيكُمُ اللَّهُ فِي أَوْلادِكُمْ لِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ الأُنْثَيَيْنِ﴾

(सूरह: अल-निसा, आयत संख्या: 11)

अनुवाद: अल्लाह तुम्हारी संतान (औलाद) में तुम्हें आदेश देता है कि दो बेटियों के बराबर एक बेटे का हिस्सा होगा।

(2) विरासत में पति या पत्नी होने की स्तिथि में, यदि पत्नी मृतक है तो पति को पत्नी के धन से उसका दुगना भाग मिलेगा जितना कि पति मृतक होने की स्तिथि में एक पत्नी को मिलता है।

अल्लाह तआ़ला क़ुरआन ए पाक में फरमाता है:

وَلَكُمْ نِصْفُ مَا تَرَكَ أَزْوَاجُكُمْ إِنْ لَمْ يَكُنْ لَهُنَّ وَلَدٌ فَإِنْ كَانَ لَهُنَّ وَلَدٌ فَلَكُمُ الرُّبُعُ مِمَّا تَرَكْنَ مِنْ بَعْدِ وَصِيَّةٍ يُوصِينَ بِهَا أَوْ دَيْنٍ وَلَهُنَّ الرُّبُعُ مِمَّا تَرَكْتُمْ إِنْ لَمْ يَكُنْ لَكُمْ وَلَدٌ فَإِنْ كَانَ لَكُمْ وَلَدٌ فَلَهُنَّ الثُّمُنُ مِمَّا تَرَكْتُمْ مِنْ بَعْدِ وَصِيَّةٍ تُوصُونَ بِهَا أَوْ دَيْنٍ)

(सूरह: अल-निसा, आयत संख्या: 12)

अनुवादः और तुम्हारी पत्नियों ने जो कुछ छोड़ा हो, उसमें तुम्हारा आधा है अगर उनकी औलाद न हो। लेकिन अगर उनकी औलाद हो तो वे जो छोड़ें उसमें तुम्हारा चौथाई होगा इसके बाद कि जो वसियत वे कर जाएँ वह पूरी कर दी जाए या जो क़र्ज़ (उनपर) हो वह चुका दिया जाए। और जो कुछ तुम छोड़ जाओ, उसमें उनका (पत्नियों का) चौथाई हिस्सा होगा अगर तुम्हारी कोई औलाद न हो तो। लेकिन अगर तुम्हारी औलाद हो, तो जो कुछ तुम छोड़ोगे, उसमें से उनका (पत्नियों का) आठवाँ हिस्सा होगा, इसके बाद कि जो वसियत तुमने की हो वह पूरी कर दी जाए या जो क़र्ज़ हो उसे चुका दिया जाए।

(3) अगर मरने वाला बेटा हो तो उसका पिता उसकी माँ के हिस्से की तुलना में दुगना लेगा अगर उस मृतक बेटे की औलाद न हो तो। लिहाज़ा इस स्तिथि में बाप को दो तिहाई मिलेगा और माँ को एक तिहाई।

(4) अगर मृतक बेटे की एक बेटी हो तो भी उस मृतक का पिता अपनी पत्नी (मृतक की माँ) के हिस्से की तुलना में दुगना लेगा। क्योंकि इस स्तिथि में बेटी को उसके धन का आधा हिस्सा मिलेगा और मृतक की माँ को छठा हिस्सा मिलेगा और बाप को छठे हिस्से के साथ सब बांटने के बाद का बचा हुआ भी मिलेगा।

जबकि इसके विपरीत (मुक़ाबले) में इस्लाम ने कई स्तिथियों में महिलाओं को पुरूषों के बरारबर भाग दिया है:

(1) कलाला की स्थिति में यानी न तो मय्यित की अस्ल (बाप-दादा) में से कोई हो और न ही उसकी औलाद (बेटा बेटी व पोता पोती) में से कोई हो। लेकिन माँ की ओर से सौतेले भाई और बहन हों तो भाई-बहन में से हर एक

को भाई की विरासत में से छठा हिस्सा मिलेगा। जैसा कि क़ुरआन में इसका आदेश है:

وَإِنْ كَانَ رَجُلٌ يُورَثُ كَلالَةً أَوِ امْرَأَةٌ فَلِكُلِّ وَاحِدٍ مِنْهُمَا السُّدُسُ فَإِنْ كَانُوا أَكْثَرَ مِنْ ذَلِكَ فَهُمْ شُرَكَاءُ فِي الثُّلُثِ مِنْ بَعْدِ وَصِيَّةٍ يُوصَى بِهَا أَوْ دَيْنٍ غَيْرَ مُضَارٍّ وَصِيَّةً مِنَ اللَّهِ وَاللَّهُ عَلِيمٌ حَلِيمٌ

(सूरह: अल-निसा, आयत संख्या: 12)

अनुवाद: और अगर किसी पुरूष या स्त्री के कोई औलाद न हो और न उसके माँ-बाप ही जीवित हों। लेकिन माँ की तरफ से उसका एक भाई या बहन हो तो उन दोनों में से हर एक के लिए छठा हिस्सा होगा। लेकिन अगर वे इससे अधिक हों तो फिर एक तिहाई में वे सब शरीक होंगे। इसके बाद कि जो वसियत उसने की वह पूरी कर दी जाए या जो क़र्ज़ (उसपर) हो वह चुका दिया जाए जिसमें उसने नुक़सान न पहुंचाया हो। यह अल्लाह का आदेश है और अल्लाह सब कुछ जाननेवाला, अत्यन्त सहनशील है।

(2) जब उस मरने वाले के दो से ज़ियादा माँ की तरफ से भाई और बहनें हों तो वे सब एक तिहाई को आपस में बराबर बराबर बाटेंगे।

(3) इसी तरह माँ और बाप अपने बेटे की विरासत में बराबर बराबर लेंगे अगर मृतक ने एक बेटा या दो या दो से अधिक बेटियाँ छोड़ीं। जैसा कि अल्लाह तआ़ला ने फरमाया:

وَلِأَبَوَيْهِ لِكُلِّ وَاحِدٍ مِنْهُمَا السُّدُسُ مِمَّا تَرَكَ إِنْ كَانَ لَهُ وَلَدٌ

(सूरह: अल-निसा, आयत संख्या: 11)

अनुवाद: और अगर मरनेवाले की औलाद हो, तो उसके माँ-बाप में से हर का उसके छोड़े हुए माल का छठा हिस्सा है।

(4) जब मय्यित महिला हो और वह पति और एक सगी बहन छोड़ जाए तो दोनों को आधा आधा हिस्सा मिलेगा।

(5) जब मय्यित महिला हो और वह पति और एक पिता की तरफ से बहन छोड़ जाए तो दोनों को आधा आधा हिस्सा मिलेगा।

(6) जब एक औरत की मृत्यु हो गई और उसने पति, माँ और एक अपनी सगी बहन छोड़ा, तो आधा पति को, और आधा माँ को मिलेगा। और हज़रत इब्न अब्बास के यहाँ बहन को कुछ मिलेगा।

(7) जब एक औरत की मृत्यु हो गई और वह पति, एक सगी बहन, एक बाप शरीक बहन और एक माँ शरीक बहन छोड़े तो आधा पति को मिलेगा और आधा उसकी सगी बहन को और बाप शरीक बहन और माँ शरीक बहन को कुछ नहीं मिलेगा।

(8) जब एक आदमी की मृत्यु हो गई और वह दो बेटियाँ और माता पिता को छोड़ जाए। तो बाप को छठा हिस्सा मिलेगा और माँ को भी छठा हिस्सा मिलेगा और हर एक बेटी के लिए एक तिहाई है।

इसी तरह कई स्थितियों में इस्लाम ने स्त्रियों को पुरूषों की तुलना में अधिक हिस्सा दिया:

(1) जब एक आदमी मर गया और उसने माँ, दो बेटियाँ और एक भाई छोड़ा है। तो इस स्तिथि में बेटी को भाई की तुलना में डेढ़ गुना अधिक हिस्सा मिलेगा।

(2) जब आदमी की मृत्यु हो गई और मृतक ने एक बेटी और माँ-पिता को छोड़ा तो भी बेटी को मृतक के पिता की तुलना में डेढ़ गुना अधिक हिस्सा मिलेगा।

(3) जब कोई आदमी मर गया और उसने दो बेटियाँ, बाप और माँ को छोड़ा तो बेटी को बाप का दुगना हिस्सा मिलेगा।

(4) और यही हुक्म उस स्थिति में भी होगा जब किसी महिला की मृत्यु हो गई और वह पति, माँ, दादा दो माँ शरीक भाई और दो बाप शरीक भाई छोड़ जाए।

(5) जब कोई आदमी मर जाए और वह दो बेटियाँ, एक बाप-शरीक भाई और एक बाप-शरीक बहन को छोड़ गया तो दोनों बेटियों में से हर एक को एक तिहाई मिलेगा। और बाक़ी एक तिहाई में से दो तिहाई भाइयों को मिलेगा और एक तिहाई उसकी बहन को मिलेगा।

तथा कुछ स्थितियां ऐसी भी हैं जिनमें में महिलाओं को तो हिस्सा मिलता है लेकिन पुरूषों को कुछ नहीं मिलता है।

(1) जब एक आदमी की मृत्यु हो जाए और एक बेटी, एक बहन और एक चचा छोड़ जाए। तो बेटी को आधा और बहन को आधा मिलेगा और चाचा को कुछ नहीं मिलेगा।

(2) जब एक महिला की मृत्यु हो जाए और पति, एक सगी बहन, एक बाप-शरीक बहन और एक बाप-शरीक भाई छोड़े तो पति को आधा मिलेगा और सगी बहन को आधा मिलेगा। और बाप-शरीक बहन और भाई को कुछ नहीं मिलेगा।

(3) जब किसी महिला की मौत हो जाए और वह पति, पिता, माँ, बेटी, और एक पोता और एक पोती छोड़ जाए तो पति को एक चौथाई मिलेगा और माता पिता में से हर एक को एक छठा हिस्सा मिलेगा और बेटी को आधा मिलेगा। जबकि पोता और पोती को कुछ नहीं मिलेगा। याद रहे कि यहाँ बेटी को पोते की तुलना में छे गुना अधिक हिस्सा मिला।

(4) जब एक महिला की मृत्यु हो जाए और पति, माँ, दो माँ-शरीक भाई, और एक या एक से अधिक सगे भाई छोड़ जाए तो पति को आधा है और माँ को एक छठा हिस्सा मिलेगा। और माँ-शरीक भईयों को एक तिहाई मिलेगा। और हज़रत उ़मर-अल्लाह उनसे प्रसन्न रहे-के ख़्याल के अनुसार सगे भाईयों को कुछ नहीं मिलेगा।

(5) जब किसी महिला की मृत्यु हो जाए और वह पति, दादा, माँ, सगे भाई और माँ-शरीक भाईयों को छोड़ जाए तो पति को आधा है और दादा को एक छठा और माँ को भी एक छठा हिस्सा मिलेगा। और बाक़ी सगे भाइयों को दे दिया जाएगा। और माँ-शरीक भाईयों को कुछ नहीं मिलेगा।

इससे साफतौर पर यह पता चलता है कि कि इस्लामी विरासत के विज्ञान को पढ़नेवाला व्यक्ति अच्छी तरह से यह जान लेगा कि इस्लामी विरासत में केवल चार स्थितियां ऐसी हैं जिनमें महिला का हिस्सा पुरुष के हिस्से की तुलना में आधा है जबकि इसके मुक़ाबले में तीस अधिक स्तिथि ऐसी हैं जिन में स्त्री पुरूष के बराबर या उससे बढ़कर हिस्सा लेती है, या फिर स्त्री तो हिस्सा पाती है लेकिन पुरूष को कुछ नहीं मिलता है।

दूसरी शरिअ़तों में महिला की मीरास पर एक नजर

आइए यह भी जान लेते हैं कि दूसरी शरिअ़तों ने मीरास में महिला को क्या अधिकार दिया है।

बाइबिल में मीरास केवल पुरुषों के लिए हैं जैसा कि उसमें है: "कि अगर किसी पुरुष की दो पत्नियाँ हो उनमें से एक उसको प्यारी हो और दूसरी नापसंद हो। और उन दोनों से बेटे पैदा हुए हों तो अगर पहला बेटा (यानी सबसे बड़ा बेटा) ना पसंदीदा पत्नी से है तो कोई भी चीज बांटते समय पति के लिए यह जायज़ नहीं कि वह पसंदीदा पत्नी के बड़े बेटे को ना पसंदीदा पत्नी के बड़े बेटे से ऊपर रखे। बल्कि वह उसी नापसंदीदा पत्नी के बड़े बेटे को आगे रखे ताकि उसे दुगना हिस्सा दे क्योंकि यह उसकी पहली निशानी है और उसे पहला होने का अधिकार हासिल है। (तस़नियाः 21, 15,17)

बेटियों को विरासत नहीं मिलती लेकिन केवल उसी समय जबकि बेटे ना हों।: "सुलह़फ़ाद की बेटियाँ आगे बढ़ी और ह़ज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के सामने खड़ी हुईं और कहने लगीं: जंगल में हमारे पिता की मृत्यु हो गई और उनका कोई बेटा नहीं है तो केवल बेटा ना होने के कारण क्यों उनका नाम कबीले से मिटा दिया गया? हमारे चचाओं के सामने हमारे बाप की दौलत दो तो ह़ज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने उनके दावे को अपने रब अल्लाह के सामने रखा तो अल्लाह ताआ़ला ने उनसे इरशाद फरमायाः सुलह़फ़ाद की बेटियाँ सच बोल रही हैं। उनके चाचाओं के सामने उन्हें उनके हिस्से की दौलत दे दो ताकि वे अपने पिता के हिस्से पर क़ब्ज़ा करलें। और बनी इसराइल की क़ौम से फरमादो अगर किसी व्यक्ति की मृत्यु हो जाए और उसका कोई बेटा ना हो तो उसकी दौलत उसकी बेटी को दे दो। अगर बेटी ना हो तो भाइयों को दे दो। अगर भाई ना हो तो उसके चाचाओं को दे दो। और अगर मरने वाले के बाप के भाई (यानी

मय्यित के चाचा) भी ना हों तो उसके कबीले में जो नसब के एतबार से उसके सबसे ज्यादा नज़दीक हो उसे ही उसका हिस्सा दे दो। लिहाजा वही उसका वारिस बनेगा। तो अल्लाह ताआ़ला ने यह जो ह़ज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को आदेश दिया था यही बनी इस्राईल की क़ौम के लिए मीरास बांटने का नियम बन गया।

फ्रांसीसी कानून के आर्टिकल 270 ने इस बात को स्पष्ट किया है कि शादीशुदा औरत (अगरचे उसकी शादी इस शर्त के साथ हुई थी उसकी और उसके शौहर की दौलत जुदा-जुदा और अलग-अलग रहेगी) के लिए जायज नहीं कि वह अपना धन किसी को दे दे या अपनी दौलत को कहीं दूसरी जगह ले जाए या फिर किसी के पास गिरवी रख दे। और ना ही वह कोई चीज बदले में लेकर या बिना बदले के उसका किसी को मालिक बना सकती है जब तक कि इन सभी सौदों में पति की हिस्सेदारी न हो या लिखित रूप से उसकी इजाज़त न मिल जाए।

अंग्रेजी कानून के तहत पति अपनी पत्नी को 6 पैसों में दूसरे पुरुष को बेचता था और यह कानून 1805 ईसवी तक रहा जबकि फ्रांसीसी विरोध के कानून ने औरत को बच्चे और पागल की तरह कम बुद्धि वाला मानते हुए उसे उसकी दौलत व संपत्ति का इस्तेमाल करने से रोक दिया था जब तक कि उसका कोई वली (उसके घर का कोई ज़िम्मेदार पुरुष) न हो। यह कानून 1938 ईस्वी तक रहा।

और जब भी किसी ने औरत पर होने वाले अत्याचार को बदलना चाहा तो उसे ओर भी ज़्यादा अत्याचार में डाल दिया। यहाँ तक कि उसकी स्त्रीत्व (महिला पन), ज़ात और पहचान को भी मिटा दिया। जिम्मेदारियों के बोझ में पुरुष के बराबर कर दिया। और उस पर अत्याचार के पहाड़ तोड़ कर और उसे

बे जान व वे आत्म का जिस्म व मूर्ति बना दिया। लिहाज़ा जब तक औरत इस्लाम से दूर रहेगी उसकी तकलीफ और परेशानी और मेहरूमी बढ़ती जाएगी। क्योंकि केवल इस्लाम ही उससे सम्मान, इज़्ज़त, एहतराम, संतुष्टि और सुकून देने और उसे उसकी फितरत के हिसाब से रखने की क्षमता व ताक़त रखता है। क्योंकि वही केवल एक तन्हा अल्लाह का धर्म है।

(6) इस्लाम और दूसरे धर्मों में बहुविवाह: लेखक: जमाल मुहम्मद ज़की इस्लाम में बहुविवाह से संबंधित संदेह व ऐतराज़ का रद्द और जवाब।

इस्लाम के दुश्मन व बीमार दिल और उन जैसे लोग बहुविवाह (एक से ज़्यादा महिलाओं से विवाह करना) के बारे में उतरने वाली कुरआन ए पाक की आयत (यानी[1] ﴿ فَانْكِحُوا مَا طَابَ لَكُمْ مِنَ النِّسَاءِ مَثْنَى وَثُلَاثَ وَرُبَاعَ ﴾ अनुवाद: तो विवाह करो उन औरतों से जो तुम्हें पसंद आएं दो दो और तीन तीन और चार चार। [अनुवाद कंज़ुल ईमान]) को बुरा भला कहते और निंदा करते हैं कि कुरआन ए पाक ने महिला और उसके अधिकार को किनारे रखा है जैसा के इस्लाम से पहले जाहिली युग यानी समय में था।

इस्लाम में बहुविवाह और उसके मक़सदों को स्पष्ट करने से पहले हम एक महत्वपूर्ण प्रश्न का जवाब देना चाहते हैं वह यह है कि क्या इस्लाम ने बहुविवाह बहुविवाह का निर्माण किया है या फिर यह रिवाज इस्लाम से पहले ही से मौजूद था? इतिहास को पढ़ने से पता चलता है कि बहुविवाह का रिवाज इस्लाम से बहुत पहले ही से पुराने जमाने से ही हर समय और हर समाज में के लोगों के अंदर मौजूद रहा है।

तौरात और यहूदी धर्म में बहुविवाह: तौरात में यहूदियों को एक से ज़्यादा महिलाओं से शादी करने की इजाज़त दी है और पत्नियों की संख्या और तादाद की भी कोई सीमा नहीं रखी है। लेकिन हाँ तलमूद ने चार पत्नियों की सीमा रखी है इस शर्त के साथ कि पति उन्हें खर्च देने की क्षमता रखता हो। अतः तलमूद कहता है: पुरुष को एक समय में चार से ज़्यादा पत्नियाँ रखना जायज़

---

[1] सूरह: अल-निसा, आयत संख्या: 3

नहीं जैसा के ह़ज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने किया जबकि पति ने पहली शादी के समय इसकी कसम ना खाई हो अगरचे ऐसी संख्या के लिए उन्हें खर्च देने की क्षमता व ताकत शर्त है। [1]

उत्पत्ति पुस्तक में है: ह़ज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम ने (31) लिया... (24) राह़ील... (25) राह़ील की दासी बलहा.... (26) और लिया की दासी ज़ुल्फा से विवाह किया। लिहाज़ा इस तरह से एक समय में आप की चार पत्नियाँ थीं : दो बहनें यानी लिया और राह़ील और दो उनकी दासियाँ बल्हा और और ज़ुल्फा।[2]

गिनती की किताब में है: ह़ज़रत दाऊद अ़लैहिस्सलाम की कई पत्नियाँ और दासिया थीं। इसी तरह उनके बेटे ह़ज़रत सुलेमान अ़लैहिस्सलाम की भी। अतः ह़ज़रत सुलेमान अ़लैहिस्सलाम की एक ह़ज़ार से ज़्यादा पत्नियाँ थीं। इसी तरह एक यहूदी बादशाह अबिया की भी चौदह पत्नियाँ थीं।[3] और जदऊ़न के 70 बेटे थे सब उसी की औलाद थे। क्योंकि उसकी बहुत सी पत्नियाँ थी। और उसकी दासी सरिया जो शकीम में रहती थी से भी उसका एक बेटा था जिसका नाम अबीमालिक था।....[4]

---

[1] यहूदी, ईसाई इस और इस्लाम धर्म में महिला का स्थान (अरबी) लेखक: अल-लिवा अ़हमद अ़ब्दुल वह्हाब, पेज: 150, दान मंत्रालय, और तलमूद: यह दूसरी किताब है जिसके बारे में यहूदी कहते हैं कि इसमें वे शिक्षिकाएं हैं जो स्वयं ह़ज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से ली गईं हैं और वे इसे तौरात से भी बड़ा दर्जा देते हैं।

[2] उत्पत्ति सफ़र (किताब) 35: 23 - 26

[3] गिनती का सफर (किताब) 3: 30

[4] अल-क़ुज़ात (निर्णायक या जज) 8: 3 - 31 यहूदी, ईसाई और इस्लाम धर्म में महिला के बारे में, लेखक ज़की अबू उ़द्दा, पेज: 284 - 286

लेकिन फिर यहूदी विद्वानों ने नागरिक कानून के तहत इस बहुविवाह के रिवाज को मनसूख कर दिया यानि मिटा दिया। और फिर यहूदी असेंबलियों द्वारा भी इसे पास कर दिया गया और फिर इस तरह से इस बिल को क़ानूनी व शरई हैसियत प्राप्त कर ली। इस्राइली शरीयत के कानून के आर्टिकल 54 में है की: पुरुष एक से ज़्यादा पत्नियाँ नहीं रख सकता है। और शादी करते समय उसे इस बात की शपथ लेना जरूरी है।[1] लिहाजाआ इस बहुविवाह की मनादी तौरात से नहीं हुई है बल्कि शपथ लेने की वजह से हुई है।

बाइबिल और ईसाई धर्म में बहुविवाह: शुरुआत में ईसाई धर्म ने भी यहूदी धर्म की तरह बहुविवाह को माना और सत्तरवीं शताब्दी तक पादरियों ने भी इस में कोई दखल नहीं दी। लेकिन फिर इसी सत्तरवीं शताब्दी में इसकी मनादी शुरू हुई और 1750 ई. में इसको पूरो तौर से मना कर दिया गया। इसाई पादरियों का इस मामले में यह कहना था कि ऐसा करने से वे पूरे तरह अपने धर्म के प्रचार के लिए खाली हो जाएंगे और महिलाएँ और उनकी समस्याएं चर्च और उसके अनुयायियों की देखभाल करने में रुकावट नहीं बनेंगी।

यह मनादी और रुकावट धीरे धीरे शुरू हुई। पहले तो यह (यानी बहुविवाह) पादरियों के लिए हराम व नाजायज़ था। फिर उसके बाद पादरियों के अलावा दुसरे लोगों के लिए केवल एक ही शादी धार्मिक विधियों (यानी रस्मों और रिवाजों) के अनुसार की जाने लगी। अगर कोई ईसाई व्यक्ति दूसरी शादी करना चाहता तो धार्मिक रस्म व रिवाज के बगैर ही शादी करता। फिर एक से अधिक शादी करना पूरी तरह से ही मना कर दिया गया। लेकिन दासी रखना अभी भी

---

[1] यहूदी शरीअ़त में महिला का दर्जा (अरबी) लेखक: सैयद मुहम्मद आशूर,पेज: 11, उसका संदर्भ: अल-फिक्र अल-इस्लामी अल-इस्राइली, लेखक: प्रोफेसर हसन ज़ाज़ा

जायज़ था। लेकिन 970 में एक महान पादरी अबराम सूरबानी के आदेश से दासी रखने को भी मना कर दिया गया। [1]

लिहाज़ा इस तरह से बहुविवाह से मनादी इंसान की तरफ से गढ़ी गई है। अल्लाह की तरफ से नही आई है।

फिर उन्होंने ब्रह्मचर्य (कुंवारा रहना) का प्रोपेगंडा शुरू किया जो केवल ईसाई धर्म में ही था। वे ब्रह्मचर्य को आत्मा के सुधार, पवित्रता, विश्वास और ईमान में तरक्की और चर्च के दर्जों में ज़्यादती का कारण समझते थे। उनके ख्याल में शहवत एक बुरी और घिनौनी चीज़ थी। अतः शादी ना करने के दावे की दलील में बोलिस कहता है: मैं चाहता हूँ कि तुम बेफिक्र रहो क्योंकि कुंवारा व्यक्ति हमेशा अपने परवरदिगार के मामलों में डूबा रहता है और उसका मकसद अल्लाह को राज़ी करना रहता है। लेकिन शादीशुदा व्यक्ति दुनिया के मामलों में चिंतित और डूबा रहता है। और उसका मकसद अपनी पत्नी को राज़ी करना रहता है। क्योंकि उसका ध्यान बट जाता है। इसी तरह गैर शादीशुदा और कुंवारी महिलाएं अपने रब के मामलों के बारे में चिंतित रहती और उसी में डूबी रहती हैं और उनका मकसद शरीर और आत्मा के एतबार से पवित्र होना रहता है।[2]

इस तरह से उन्होंने शरीअ़त के अह़काम और क़ानूनों को तोड़ मरोड़ दिया। और उनके विचार गलत साबित हुए जिन्हें सही बुद्धि और पवित्र फितरत कभी स्वीकार नहीं कर सकती।..... क्योंकि शादी के बिना औलाद और मानव

---

[1] यहूदी, ईसाई और इस्लाम धर्म में महिला के बारे में, लेखक ज़की अबू उ़द्दा, पेज: 291-292

[2] (कोरनिस्व 7: 32 -) यहूदी, ईसाई और इस्लाम धर्म में महिला के बारे में, लेखक ज़की अबू उ़द्दा, पेज:304

जाति कहाँ से आएगी? प्यार, मोहब्बत, दया और मन की शांति कहाँ से प्राप्त होगी? अल्लाह ताआ़ला ने मनुष्य में जो फितरती ख्वाहिशें रखी हैं वह कैसे बुझेंगी? और उनके निकलने का क्या सही तरीका होगा? हम वह वैवाहिक घर कहाँ से लाएंगे जो बुराइयों, प्रेम के चक्कर और नाजायज़ संबंधों में पड़ने से बचाने का एक सुरक्षित क़िला है? और पुरुष और महिला के अंदर जो माँ और बाप की भावनाएं हैं वे कहाँ जाएंगी?

इस्लाम में बहुविवाह

अल्लाह तआ़ला ने मनुष्यों को सम्मान व इ़ज़्ज़त देने, उनपर अपनी कृपाओं को पूरा करने, उन्हें शरीरिक और आत्मिक तोर पर गंदगी, बुराई और भ्रष्टाचार से पवित्र करने, उनकी पवित्रता और पाकी, शांति और सुकून, प्यार और मोहब्बत और शक्ति और ताक़त में ज़्यादति करने के लिए शादी की इजाज़त दी। अल्लाह तआ़ला इरशाद फ़रमाता है।:

﴿وَاللَّهُ جَعَلَ لَكُمْ مِنْ أَنْفُسِكُمْ أَزْوَاجًا﴾[1]

अनुवाद: और अल्लाह ने तुम्हारे लिए तुम्हारी जिन्स (लिंग) से औरतें (पत्नियाँ) बनाईं। (अनुवाद: कंज़ुल ईमान)

लिहाज़ा शादी पुरुष और महिला के बीच सबसे मज़बूत और गहरा रिश्ता है। यह पुरुष और महिला के हर तरह के संबंध को शामिल है। अल्लाह ताआ़ला इरशाद फरमाता है।:

﴿هُوَ الَّذِي خَلَقَكُمْ مِنْ نَفْسٍ وَاحِدَةٍ وَجَعَلَ مِنْهَا زَوْجَهَا لِيَسْكُنَ إِلَيْهَا﴾[2]

---

[1] सूरह: अल-नह़ल, आयत संख्या: 72

[2] सुरह:अल-आ़अराफ़, आयत संख्या:189

अनुवादः वही है जिसने तुमको एक जान से पैदा किया और उसी से उसका जोड़ा (पत्नी को) बनाया ताकि वह उससे सुकून प्राप्त करे। (अनुवादः कंज़ुल ईमान)

यह मनुष्य की हक़ीक़त और उसके विवाह के बारे में इस्लामी नज़रिया है और यह एक सच्चा नज़रिया है।[(1)]

इस्लाम ने लोगों को (कुंवारा रहना) की तरफ नहीं बुलाया है। ह़दीस़ शरीफ में है कि अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फरमायाः बेशक अल्लाह ने हमें ब्रह्मचर्य के बजाय सच्चा धर्म दिया।[(2)] बल्कि इस्लाम ने शादी को पवित्रता और पाकी का ज़रिया बताया है। अल्लाह के नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इरशाद फरमायाः जो व्यक्ति अल्लाह तआ़ला से पाक और साफ-सुथरा मिलना चाहे मिलना चाहे वह आजाद महिलाओं से शादी करे।[(3)] तथा अल्लाह के नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इरशाद फरमायाः शादी मेरी सुन्नत है तो जिसने मेरी सुन्नत पर अमल नहीं किया तो वह मुझसे नहीं है। लिहाज़ा शादी करो (और अपनी संख्या बढ़ाओ) क्योंकि तुम्हारी वजह से मैं दूसरी उम्मतों पर गर्व करूंगा।[(4)] तथा आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इरशाद फरमायाः जो व्यक्ति निकाह करने कि क्षमता रखता हो तो वह निकाह

---

(1) महिला क़ुरआन के साये में (अ़रबी) लेखकः सैयद क़ुतुब, तैयार करने वालाः उ़काशा अब्दुल मन्नान, पेज :19

(2) इमाम बइहक़ी ने सअ़द बिन अबी वकास अबी से इसको उल्लेख किया है।

(3) इब्ने माजा, विवाह की किताब, ह़दीस़ संख्या:1862

(4) इब्ने माजा, विवाह की किताब, ह़दीस़ संख्या:1846

कर ले ले क्योंकि यह निगाह को ज़्यादा नीची रखता है और शर्मगाह (गुप्तांग) की ज़्यादा सुरक्षा करता है।[1]

इस्लाम ने जिन चीज़ों को जायज़ बताया है उनमें से एक बहुविवाह भी है जबकि इसकी आवश्यकता व ज़रुरत हो। इसके बारे में हम कुछ बिंदुओं (नुकतो) में बात करना चाहेंगे।

पहला:

इस्लाम ने बहु विवाह की शुरुआत नहीं की बल्कि जब इस्लाम आया आया तो यह हर समाज में बहुत मशहूर था इस्लाम से पहले जाहिली ज़माने में अरब के लोग बिना किसी शर्त के इस का अभ्यास करते थे यानी कई पत्नियाँ रखते थे।

दूसरा:

इस्लाम लोगों के मामलों को सुधारने के लिए आया है इसीलिए बहुविवाह के इस बिना कैद और शर्त के कानून को सुधारने, इसके नुकसानों को रोकने और इसमें शर्त लगाकर इसे अच्छा बनाने के लिए इस्लाम ने इसमें दखल दी ताके सब के अधिकारों की सुरक्षा व हिफ़ाज़त हो। अल्लाह तआ़ला पवित्र कुरान में इरशाद फरमाता है।

﴿وَإِنْ خِفْتُمْ أَلَّا تُقْسِطُوا فِي الْيَتَامَى فَانْكِحُوا مَا طَابَ لَكُمْ مِنَ النِّسَاءِ مَثْنَى وَثُلَاثَ وَرُبَاعَ﴾ [2]

---

[1] निसई, हदीस़ संख्या: 2242, मुस्नद अहमद (1/58)

[2] सूरह, अल-निसा, आयत संख्या: 3

अनुवाद: और अगर तुम्हें अंदेशा हो कि यतीम लड़कियों में इंसाफ ना करोगे तो निकाह में लाओ जो महिलाएं तुम्हें पसंद आए दो दो और तीन तीन और चार चार। (अनुवाद कंज़ुल ईमान)

जब यह आयत उतरी तो अल्लाह के नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने चार से ज़्यादा पत्नियाँ रखने वाले लोगों को आदेश दिया कि वह केवल चार पत्नियाँ रखें और बाकी दूसरी पत्नियों को छोड़ दें। इमाम बुखारी ने अपनी किताब "अल-अदब अल-मुफ़रद" में उल्लेख किया है की ग़ैलान बिन सलमा स़क़फ़ी ने जब इस्लाम स्वीकार किया तो उनकी दस पत्नियाँ थीं। तो नबी ए करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने उनसे इरशाद फरमाया: उनमें से चार को चुन लो।[1]

अबू दाऊद ने अपनी सनद के साथ उल्लेख किया है कि को उ़मैरह असदी बयान करते हैं जब मैं ने इस्लाम कुबूल किया तो मेरी आठ पत्नियाँ थीं लिहाज़ा मैंने नबी ए करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम को इस बारे में बताया तो आप सल्लल्लाहो अलेही वसल्लम ने मुझसे इरशाद फ़रमाया: उनमें से केवल चार को बाक़ी रखो।[2] इमाम शाफ़ई अपनी मुसनाद में उल्लेख करते हैं की नोफ़ल बिन मुआ़वियह दैलमी बयान करते हैं कि जब मैं मुसलमान हुआ तो मेरे निकाह में पांच महिलाएं थीं। तो में नहीं इसके बारे में रसूल ए करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम से पूछा तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फरमाया: एक को अलग कर दो और चार को बाक़ी रखो। (आप सल्लल्लाहु अ़लैहि

---

[1] बुखारी, अल- अदब अल- मुफ़रद, ह़दीस़ संख्या: 256, इब्ने माजा, विवाह की किताब, मुसनद अह़मद (2/13 14)

[2] अबू दाऊद, 2241, इब्ने माजा 1952,

वसल्लम का यह आदेश सुनकर) मैंने अपनी सबसे पहली पत्नी को अलग कर दिया जो बांझ थी और साठ साल से मेरे साथ थी।[1]

इस तरह इस्लाम ने बहुविवाह के कानून में केवल चार पत्नियाँ रखने की सीमा रखी और उसे एक अच्छा और दुरुस्त कानून बनाया जबकि इस्लाम से पहले इसमें कोई सीमा नहीं थी। जितनी चाहते थे उतनी पत्नियाँ रखते थे।

तीसरा:

तथा इस्लाम बहुविवाह के इस कानून को पुरुष की ख्वाहिश पर नहीं छोड़ा बल्कि इसे न्याय व इंसाफ की शर्त के साथ इंसाफ की शर्त के साथ रखा है लिहाज़ा अगर वह न्याय और इंसाफ नहीं कर सकता तो उसके लिए बहुविवाह (यानी कई पत्नियाँ रखना) जायज़ नहीं है। और इसके लिए इस्लाम ने दो प्रकार का न्याय व का ज़िक्र का ज़िक्र किया है।

पहला: अनिवार्य (ज़रूरी) न्याय व इंसाफ़: इसका मतलब यह है कि व्यवहार, खर्च, साथ रहने और रात गुजारने और सभी ज़ाहिरी कामों में न्याय व इंसाफ से काम लेना इस तौर पर की किसी भी पत्नी के पर उसके अधिकार में अत्याचार ना हो और किसी को भी किसी पर किसी से आगे और ऊपर ना रखे। इसका ज़िक्र व बयान क़ुरआन ए पाक की निम्नलिखित आयत में आया है।:

﴿فَإِنْ خِفْتُمْ أَلَّا تَعْدِلُوا فَوَاحِدَةً﴾ [2]

अनुवाद: अगर तुम्हें डर हो कि तुम इंसाफ ना करोगे तो एक।

---

[1] इमाम शाफ़ई, विवाह की किताब, जिल्द: 2/19

[2] सूरह, अल-निसा, आयत संख्या: 3

और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इरशाद फ़रमाया: जिसकी दो पत्नियाँ हो और वह उन में न्याय व इंसाफ ना करे तो वह क़यामत के दिन ऐसी स्थिति में आएगा कि उसके आधे धड़ को लकवा मारा हुआ होगा।[1]

तथा इमाम मुस्लिम अ़ब्दुल्लाह बिन अम्र बिन अल-आ़स से उल्लेख करते हैं कि अल्लाह के नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इरशाद फ़रमाया: इंसाफ करने वाले अल्लाह के यहाँ सबसे ज्यादा दयालु के दाएं तरफ नूर के मिंबरो पर होंगे। और अल्लाह के दोनों हाथ यमीन (सीधे) हैं। ये वे लोग हैं जो अपने फैसलों, अपने घर और परिवार वालों और अपनी प्रजा में न्याय व इंसाफ करते हैं।[2]

दूसरा: भावनाओं में न्याय: दिल्ली लगाओ और भावनाओं में न्याय व इंसाफ करना। लेकिन इस तरह का न्याय व इंसाफ इंसानी इरादे से बाहर है और उसे उसकी क्षमता व ताकत नहीं है। यही कारण है कि उससे इस प्रकार के न्याय की माँग भी नहीं है। इसी का बयान क़ुरआन की निम्नलिखित आयत में हुआ है।:

﴿وَلَن تَسْتَطِيعُوا أَن تَعْدِلُوا بَيْنَ النِّسَاءِ وَلَوْ حَرَصْتُمْ فَلَا تَمِيلُوا كُلَّ الْمَيْلِ فَتَذَرُوهَا كَالْمُعَلَّقَةِ﴾ [3]

अनुवाद: और तुमसे कभी ना हो सकेगा की महिलाओं (यानी अपनी पत्नियों) को दिली लगाओ और प्यार में बराबर रखो भले ही तुम कितनी ही

---

[1] निसई, ह़दीस़ संख्या: 3942, तिर्मीज़ी: 1141, इब्ने माजा:1969, दारमी: 2206, अह़मद: 8363, 9740

[2] मुस्लिम, किताब अल-इमारह, ह़दीस़ संख्या:1827

[3] सूरह, अल-निसा, आयत संख्या:129

कोशिश कर लो। तो यह तो ना हो की एक तरफ पूरा झुक जाओ की दूसरी को इधर लटका हुआ छोड़ दो।

लेकिन इस प्रकार का मतलब किसी भी पत्नी पर अत्याचार करना नहीं है। लिहाज़ा किसी का दिल अगर किसी एक पत्नी की तरफ ज़्यादा झुकता है तो कम से कम दूसरी के लिए भी उसके दिल में कुछ जगह होनी चाहिए। ऐसा नहीं होना चाहिए कि एक ही तरफ पूरी तरह से झुक जाए और दूसरी को बिल्कुल ही छोड़ दे जैसे कि वह बेकार हो या शादीशुदा ही ना हो। ह़ज़रत ए आयशा रद़ियल्लाहु अ़न्हा नबी ए करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की पत्नी थीं अल्लाह के नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के दिल में उनका एक विशेष स्थान व दर्जा था और दूसरी पत्नियों की तुलना में नबी ए करीम सल्लल्लाहू अ़लैहि वसल्लम के दिल का लगाओ उनकी तरफ ज़्यादा था। यही वजह है कि नबी ए करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम पत्नियों के दरमियान बारी रखकर यह इरशाद फरमाते थे: ऐ अल्लाह! यह मेरा बटवारा है जिस पर मैं ताकत रखता हूँ। लेकिन जिस की ताकत तू रखता है मैं नहीं रखता उसके बारे में मेरी निंदा न करना।[1]

लिहाज़ा दूसरी आयत से पहली आयत में बयान होने वाले बहुविवाह की इजाज़त को मना नहीं किया जा सकता। क्योंकि पहली वाली आयत में जो न्याय व इंसाफ की माँग की गई है वह ज़ाहिरी न्याय व इंसाफ है जबकि दूसरी आयत में जो न्याय व इंसाफ की माँग की गई है वह यह है किसी एक बीवी ही की तरफ पूरी तरह से न झुक जाए। क्योंकि दिली लगाओ व झुकाओ इंसान की ताकत और क्षमता और उसके इरादे में नहीं है। बल्कि दिल तो अल्लाह

---

[1] अबू दाऊद, ह़दीस़ संख्या: 1234, तिर्मीज़ी: 1140, निसई: 647, इब्ने माजा: 1971

तआ़ला के क़ब्ज़े में हैं। वह जिस तरफ चाहता है उन्हें फेर देता है। यही कारण है कि नबी ए करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम यह दुआ करते थे: ऐ दिलों को फेरने वाले अल्लाह! मेरा दिल अपने दिन पर साबित रख।

लेकिन अगर एक से ज़्यादा शादी करने में ज़ाहिरी न्याय व इंसाफ भी खत्म हो जाने का डर हो तो फिर एक ही शादी करे और दूसरी शादी करना उसके लिए जायज नहीं है। क्योंकि अल्लाह तआ़ला इरशाद फ़रमाता है।

﴿فَإِنْ خِفْتُمْ أَلَّا تَعْدِلُوا فَوَاحِدَةً﴾ [1]

अनुवाद: अगर तुम्हें डर है कि तुम इंसाफ नहीं करोगे तो (केवल) एक।

फिर इसके बाद वाली आयत में इसकी हिकमत बयान की गई है और वह अत्याचार और जुल्म से बचना है और न्याय व इंसाफ का निर्माण करना है। अल्लाह तआ़ला इरशाद फ़रमाता है।:

﴿ذَٰلِكَ أَدْنَىٰ أَلَّا تَعُولُوا﴾ [2]

अनुवाद: यह इसके ज़्यादा नज़दीक है कि तुमसे अत्याचार ना हो। (अनुवाद: कंज़ुल ईमान)

चौथा:

नियमों और शर्तों के साथ बहुविवाह की इजाज़त की निम्नलिखित हिकमतें हैं और सच तो यह है कि अल्लाह ही इसकी हिकमतों को ज़्यादा जानता है।

(1) बहुविवाह का मक़सद हैवानी ख्वाहिश की संतुष्टि या एक महिला से दूसरी महिला को बदलना नहीं है। बल्कि कई ज़रूरतों और समस्याओं का यह

---

[1] सूरह, अल-निसा, आयत संख्या:3

[2] सूरह, अल-निसा, आयत संख्या:3

एक ज़रूरी समाधान है। और इस्लाम जीवन की ज़रूरतों और समस्याओं के आड़े नहीं आता। क्योंकि इस्लाम तो जीवन की तमाम समस्याओं का सही समाधान तलाश करके देता है और किसी भी ज़रूरत व परेशानी और समस्या को उसका सही समाधान दिए बग़ैर नहीं छोड़ता। तो भला इस्लाम किसी समस्या या ज़रूरत के आड़े कैसे आ सकता है।

(2) अगर हम यह मानें कि हमारे सामने दो योजनाएं या निज़ाम हैं - जैसा के प्रोफ़ेसर महमूद इ़मारा कहते हैं- इनमें से एक बहुविवाह की इजाज़त देता है, पुरुष और महिला के बीच दूसरे तमाम नाजायज़ संबंधों को मना करता है और इ़ज़्ज़त से खिलवाड़ करने वालों और व्यभिचार (ज़िना या महिला के साथ नाजायज़ संबंध रखना) करने वालों को सख्त सज़ा देता है। जबकि दूसरा निज़ाम बहुविवाह को मना करता है पुरुष और महिला के बीच प्रेम जैसे गलत संबंधों की इजाज़त देता है और व्यभिचार व ह़राम कारी करने वालों को सजा नहीं देता है। ज़ाहिर है कि ऐसी सूरत में बहुविवाह की अनुमति व इजाज़त देना जरूरी हो जाता है। लिहाज़ा इससे स्पष्ट हुआ कि पहला निज़ाम ही सबसे अच्छा और बेहतर है। क्योंकि यह महिला, उसके अधिकार और उसके बच्चों की मानवता का सम्मान करता है।[1]

(3) इस्लाम जब समाज को व्यक्ति और समूह के तौर पर देखता है तो समाज के फायदों को व्यक्ति के फायदों से आगे रखता है ताकि सबको फायदें हासिल हों और परेशानियों से बचा जा सके। अब इस नियम की रोशनी में हम यह कह सकते हैं कि सात स्थितियाँ ऐसी हैं जो बहुविवाह को चाहती हैं जिनमें

---

[1] जाहिलों के विचारों से महिला की आज़ादी (अरबी) लेखक: प्रोफ़ेसर मह़मूद इ़मारह, पेज: 123-124

से चार स्थितियाँ तलाकशुदा महिला, विधवा महिला, बूढ़ी गैर शादीशुदा महिला और बांझ महिला के साथ खास हैं। जबकि तीन स्थितियाँ पुरुष की फितरत, युद्ध की स्थिति और विश्व में अल्लाह के कानूनों से संबंधित हैं। [1]

महिला के साथ की स्थितियाँ

(1) तलाकशुदा, विधवा और बूढ़ी कुंवारी महिलाएं यह सब महरूमी की स्थिति में रहती हैं क्योंकि बहुत कम लोग ही इनसे शादी करने में दिलचस्पी रखते हैं। लिहाज़ा यह दबाव और फित्री ख्वाहिश से संघर्ष की स्थिति में जिंदगी बसर करती हैं। ऐसी सूरत में उनके सामने दो रास्ते होते हैं या तो बदचलनी का रास्ता चुन लें या क्या शादीशुदा पुरुषों की दूसरी तीसरी या चौथी पत्नियाँ बन जाएं लिहाजा ज़ाहिर है कि ऐसी सूरत में महिला को बदचलनी से सुरक्षित रखने के लिए बहुविवाह ही सिर्फ अच्छा समाधान है।

(2) महिला के बांझ होने और पति की औलाद पैदा करने की फित्री ख़्वाहिश की स्थिति। ऐसी सूरत में पति के सामने दो रास्ते हैं दो रास्ते हैं या तो फित्री ख्वाहिश को पूरा करने यानी औलाद पैदा करने के मकसद से उस बांझ पत्नी को तलाक दे और दूसरी से शादी कर ले या उसे भी बाकी रखे और उसकी देखभाल करे और दूसरी महिला से भी शादी कर ले ताकि उससे औलाद पैदा करे। ज़ाहिर कि पहला रास्ता दूसरे रास्ते की तुलना में ज़्यादा बुद्धि वाला और बेहतर है। क्योंकि पहले रास्ते यानी तलाक देने में बीवी का सम्मान चला जाता है और घर उजड़ जाता है जबकि दूसरे रास्ते में यह सब नहीं होता न सिर्फ यह बल्के हो सकता है कि उस बांझ महिला को दूसरी पत्नी के बच्चों से

---

[1] क़ुरआन महिला के बारे में बातचीत करता है (अरबी) लेखक अ़ब्दुर्रहमान बरबरी, पेज: 39

लगाओ हो जाए और अपने बच्चों से मेहरूमी के बदले उन बच्चों से उसे सुकून हासिल हो जाए।[1] और अल्लाह जो चाहता है पैदा फ़रमाता है। [2]

पुरुष के साथ की स्थितियाँ

(1) कुछ पुरुषों के अंदर यौन ख्वाहिश बहुत ज़्यादा होती है वे अपनी ख्वाहिशें पर काबू नहीं रख सकते। लिहाज़ा उन्हें एक महिला काफी नहीं होती है या तो शारीरिक कमजोरी के कारण या किसी ऐसी बीमारी के कारण जिसका किसी ऐसी बीमारी के कारण जिसका इलाज संभव नहीं है या फिर इस वजह से कि वह महिला अब बूढी हो चुकी होती है। तो क्या पुरुष अपनी ख्वाहिश को दबा दे और अपनी फितरती इच्छा को पूरा करने से रुक जाए? या फिर व्यभिचार और ज़िना के माध्यम से उसे उसकी इच्छा को पूरा करने की इजाज़त दी जाए? या फिर उसे पहली महिला को बाकी रखते हुए दूसरी महिला से शादी करने की इजाज़त दी जाए? निश्चित रूप से तीसरा समाधान ही सबसे बेहतर और सही है जो बुद्धि पर आधारित है जो फितरती इच्छा को भी पूरा करता है और इस्लामी अखलाक़ को भी बाक़ी रखता है बल्कि साथ ही साथ पहली पत्नी के सम्मान और उसकी इज्ज़त और देखभाल की भी सुरक्षा करता है।

(2) कभी-कभी ऐसी स्थितियाँ हो जाती हैं जिनमें महिलाओं की संख्या पुरुषों की संख्या से ज़्यादा हो जाती है जैसा के युद्धों और बीमारियों के समय में। लिहाज़ा ऐसी स्थितियों का कैसे सामना किया जाए और ऐसा क्या किया जाए जो पुरुष और महिला और सारी मानवता के लिए लाभदायक और फ़ायदेमंद हो? यहाँ तीन समाधान और उपाय हैं।

---

[1] महिला कुरान के साये में, पेज नंबर: 85 - 86

[2] सूरह:अल-शूरा, आयत संख्या: 49

पहला समाधान

हर एक पुरुष केवल एक ही महिला से शादी करे और बाकी महिलाएं - प्रतिशत के अनुसार- बिना पति, बच्चों, घर और परिवार के जिंदगी बसर करें।

दूसरा समाधान

हर एक पुरुष केवल एक ही महिला से शादी करे और पत्नी के तौर पर उसे अपने साथ रखे और दूसरी महिलाओं के साथ प्रेम जैसे नाजायज़ संबंध बनाए। लिहाज़ा इस तरह उन महिलाओं की जिंदगी में पुरुष तो आ जाएंगे। लेकिन बच्चों, घर और परिवार से यह मैहरूम रहेंगी। तथा शर्म और हया की वजह से नाजायज़ संबंध से पैदा होने वाले बच्चों की हत्या अलग होगी।

तीसरा समाधान

हर पुरुष एक से ज़्यादा महिलाओं से शादी करे और उन्हें पत्नियों का दर्जा दे जो उनके लिए हक़ीक़ी घर व परिवार और बच्चों का कारण हो। और वह अपने आप को बुराइयों, गुनाहों, जुर्मों, गलत कामों और ज़मीर की निंदा से दूर रखे और अपने समाज को बदकारी और बुराई से सुरक्षित रखे।

अब सवाल यह है के इन तीनों समाधानों में से कौनसा समाधान मानवता और मर्द की मर्दानगी के लिए सबसे ज़्यादा उचित व मुनासिब और महिला के लिए सबसे ज़्यादा बेहतर और लाभदायक है? [1]

---

[1] विश्व शांति और इस्लाम(अरबी) लेखक: सैयद क़ुतुब, पेज: 95 - 97, दार अल-शुरुक़, छ13, 1442 हिजरी, 2001 ईसवी

जवाब

बहुत ज़्यादा सोचने की ज़रूरत नहीं है क्योंकि बेशक तीसरा समाधान ही दुरुस्त और सही और सबसे बेहतर है जिसे आपातकालीन या एमरजेंसी समय में महिलाएं न केवल खुशी खुशी स्वीकार करती हैं बल्कि इसका समर्थन और इसकी माँग भी करती हैं। दूसरे विश्व युद्ध में युवाओं और पुरुषों के मरने के बाद जर्मन की महिलाओं ने पुरुषों की कमी, अपने आप और अपने बच्चों को व्यभिचार और गलत काम से बचाने और जाए इस तरीके से औलाद हासिल करने के लिए बहुविवाह (एक से ज़्यादा पत्नियाँ रखना) की माँग की। लिहाज़ा दूसरे विश्व युद्ध के बाद महिलाओं की संख्या ज़्यादा होने और पुरुषों की संख्या कम होने की परेशानी के समाधान व इलाज के लिए म्यूनिख जर्मनी में युवाओं के अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन ने इसी बहुविवाह के निज़ाम पर अमल करने का आदेश दिया। [1

पांचवा

इस्लाम ने बहुविवाह के निजाम को सुधारने और उसे न्याय व इंसाफ की शर्त के साथ अच्छा करके जायज़ करने के बाद भी उसे महिला पर थोपा और लादा नहीं है और ना ही उसे उसके स्वीकार व कुबूल करने पर मजबूर किया है। बल्कि उसने महिला को कुबूल और मना करने का पूरा अधिकार दिया है। अतः महिला को -कुंवारी हो या विधवा- शादी के कुबूल करने और मना करने की पूरी आज़ादी हासिल है। और ना ही उसके सरपरस्त (अभिभावक) को यह अधिकार है कि वह उसे किसी व्यक्ति से शादी करने के लिए मजबूर करे।

---

[1] बहुविवाह और इस्लाम में उसकी हिकमत, लेखक: प्रोफेसर जुमा अल - ख़ोली, पेज नंबर: 4

उल्लेख है कि नबी ए करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इरशाद फरमाया: "विधवा महिला का निकाह उस समय तक न किया जाए जब तक कि उसकी इजाज़त ना ले ली जाए और कुंवारी महिला का निकहा उस समय तक ना किया जाए जब तक कि उसकी इजाज़त ना मिल जाए। [1]"

तथा उल्लेख है कि एक नौजवान लड़की ने नबी ए करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के पास आकर शिकायत की कि उसकी मर्ज़ी के बिना उसके पिता ने उसका निकाह उसके चचेरे भाई से कर दिया है। तो नबी ए करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने उसके पिता को बुलाकर उसे निकाह के स्वीकार और मना करने का पूरा अधिकार दे दिया। उल्लेख है की वह लड़की ह़ज़रत आ़यशा रद़ियल्लाहु अ़न्हा के पास आई और कहा मेरे पिता ने मेरा निकाह अपने भतीजे से कर दिया है ताकि मेरी वजह से उसका मर्तबा ऊंचा करें जबकि मैं उसे पसंद नहीं करती हूँ। ह़ज़रत आ़एशा रद़ियल्लाहु अ़न्हा ने फरमाया: तू नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के तशरीफ लाने तक इंतज़ार कर। इतने में अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम भी तशरीफ ले आए तो उसने पूरी बात अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम को बताई। आपने उसके पिता को बुलाया और निकाह का अधिकार उस लड़की को दे दिया। वह लड़की कहने लगी। ऐ अल्लाह के रसूल! मैं अपने पिता के किए हुए निकाह को बाकी रखती हूँ। मैं तो यह जानना चाहती थी कि महिलाओं को भी इस निकाह के) मामले में कुछ अधिकार है या नहीं। [2]

---

[1] बुखारी,ह़दीस़ संख्या: 5136 मुस्लिम: 1419 तिर्मीज़ी: 1107, निसई: 3265, इब्ने माजा: 1811 आबू दाऊद: 2092, दार्मी: 2186, मुसनद इमाम अह़मद

[2] अबु दाऊद, ह़दीस़ संख्या: 2092, इब्ने माजा: 1874, मुसनाद इमाम अहमद:24650, बईहक़ी (7/200)

सारांश और ख़ुलासा

इस्लाम ने कई समस्याओं के समाधान और इलाज के लिए बहुविवाह को जायज क़रार दिया है। और उसमें न्याय व इंसाफ की कैद और शर्त लगाई है जैसा के ऊपर बयान हुआ। अतः इस्लामी शरीअ़त आपातकालीन और एमरजेंसी स्थितियों और हालातों से निबटने के लिए बहुविवाह को समाज की सुरक्षा का बेहतरीन समाधान और ज़रिया समझती है। लेकिन फिर भी बहुविवा का यह निज़ाम इतना भी नहीं फैल गया कि जिससे महिलाओं को तकलीफ हो और बीमार दिल लोगों को कुरआन ए पाक की आलोचना और निंदा करने मौका मिले।

हां कुछ गैर मुस्लिम इंसाफ करने वाले लोगों ने इस मामले में बुद्धि, अक्लमंदी, सही सोच, न्याय और इंसाफ और निष्पक्षता से काम लिया है। यही कारण है कि वे बहुविवाह के निज़ाम की हकीकत को समझे और उसकी प्रसन्नता भी। अतः एटियनन डिनेट (Etienne Dinet) अपनी किताब "Mohammad the prophet of Allah" में कहता है: “ईसाई धर्म द्वारा अपनाए गए एकपत्नीत्व (एक ही शादी करना) निज़ाम से बहुत सारे नुक़सान हुए हैं। खासकर समाज में इसके तीन बड़े गंभीर और खतरनाक परिणाम और नतीजे सामने आए हैं: रंडीपन, गैर शादीशुदा बूढी महिलाओं की ज़्यादती और अवैध (नाजायज़) बच्चे। अखलाक़ को बिगाड़ने वाली इन समाजिक बीमारियों का उन देशों में नामोनिशान ना था जिनमें पूरे तौर पर इस्लामी शरीअ़त और कानून

लागू था। लेकिन उन देशों में पश्चिमी संस्कृति आ जाने जाने के बाद वहाँ भी ये बीमारियाँ दाखिल हो गईं। [1]"

एक अंग्रेज़ी लेखक महिला " London Truth Newspapers" में लिखती है: "मेरा दिल उन महिलाओं पर तरस और दुख से फटा जाता है जिनके पति नहीं है। लेकिन मेरा यह गम और दुख सब बेकार है भले ही तमाम लोग मेरे इस गम में शरीक क्यों ना हो जाएं। और इस समस्या कोई समाधान नहीं है सिवाय इसके कि पुरुषों को एक से ज़्यादा महिलाओं से शादी करने की इजाज़त दे दी जाए। बेशक इससे यह परेशानी दूर हो जाएगी और हमारी बेटियाँ घरेलू महिलाएं बन जाएंगी। क्योंकि सारी परेशानी यूरोपी पुरुष को केवल एक ही महिला से शादी करने पर मजबूर करने की वजह से है। [2]"

तथा वह समाज जो आजादी, स्वतंत्रा और अधिकार के नाम पर औरतों के लिए जायज़ा संबंधों के दरवाजे बंद कर रहा है वही उसके लिए बुराई और व्यभिचार के रास्ते तैयार कर रहा है और उसके साथ खिलौने की तरह खेल रहा है। तो अब वह किन अधिकार की बात कर रहा है? और महिला के किस सम्मान की वह माँग कर रहा? अल्लाह तआ़ला ने सच फरमाया है।:

﴿مُحْصَنَاتٍ غَيْرَ مُسَافِحَاتٍ وَلَا مُتَّخِذَاتِ أَخْدَانٍ﴾ [3]

---

[1] Mohammad the prophet of Allah (मुहम्मद अल्लाह के पैगंबर हैं) एटियनन डिनेट (Etienne Dinet) और सुलेमान इब्राहिम, पेज नंबर: 395, अनुवाद: प्रोफेसर अ़ब्दुल ह़लीम मह़मूद और मुह़म्मद अ़ब्दुल ह़लीम, नहडातु मिस्र, छ2, 1958 ईस्वी

[2] इस्लाम में महिलाओं के अधिकार, लेखक:रशीद रज़ा, पेज नंबर: 75, बहुविवाह और इस्लाम में उसकी ह़िकमत के बारे में, लेखक: प्रोफेसर जुमा अल-ख़ोली

[3] सूरह, अल-निसा, आयत संख्या: 25

अनुवाद: " क़ैद (निकाह) में आतियाँ, ना मस्ती निकालतीं (यानी अय्याशी नहीं करती हों) और ना यार बनातीं (हों)। "(अनुवाद: कंज़ुल ईमान) लेकिन पश्चिमी देशों के हालात से ऐसा लगता है जैसे कि वहाँ के लोग कह रहे हों।:

﴿أَخْرِجُوا آلَ لُوطٍ مِّن قَرْيَتِكُمْ إِنَّهُمْ أُنَاسٌ يَتَطَهَّرُونَ﴾ [1]

अनुवाद: लूत के घर वालों को अपनी बस्ती से निकाल दो यह लोग तो सुथरापन चाहते हैं। (अनुवाद: कंज़ुल ईमान)

[1] सूरह, अल- नम्ल, आयत संख्या:54 - 56